भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 8 | **दिसम्बर** 2007 | **अंक** 12

सम्भव है, कुछ पुस्तकें अकारण भुला दी जाती हों, किन्तु ऐसी कोई पुस्तक नहीं हो सकती जो अकारण लोगों की स्मृति में स्थान बना ले।

—डब्ल्यू० एच० आडेन

कुछ पुस्तकें केवल जायका बदलने तथा दूसरी प्रयत्नपूर्वक ग्रहण करने के लिए उपयुक्त होती हैं, लेकिन कुछ पुस्तकें अच्छी तरह जुगाली करते हुए पचा लेने योग्य होती हैं।

—फ्रांसिस बेकन

पुस्तक की उत्कृष्टता उसकी पठनीयता में निहित होती है। **—प्रो० विपिन चंद्रा**

किताबों को आग नहीं नष्ट कर सकती। आदमी मरते हैं किन्तु किताबें कभी नहीं मरतीं। कोई आदमी या कोई सेना स्मृति को नष्ट नहीं कर सकती।....हम जानते हैं कि इस युद्ध में किताबें हमारे हथियार हैं और मनुष्य की स्वतंत्रता के हथियार के रूप में इन पर (पुस्तकों पर) सदा-सर्वदा भरोसे का विश्वास आपके भीतर होना चाहिए। **—फ्रैंकलिन डी रूजवेल्ट**

एक अच्छी किताब आपका सर्वोत्तम मित्र है—न केवल आज का, बल्कि हमेशा-हमेशा का एकरस हितैषी। **—मार्टिन टपर**

मेरा अनुभव है कि जिन पुस्तकों से प्रभाव-ग्रहण के लिए हम तत्पर रहते हैं, वे ही हमें यथेष्ट प्रभावित करती हैं। ये वे पुस्तकें होती हैं जो हमारी समझ में उन मार्गों को सुगम बनाने वाली हैं जिन पर आगे बढ़कर हम अपने निर्धारित गंतव्य या लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। **—ई०एम० फोर्स्टर**

आजु मोहिं पुरुषोत्तम सुधि आई।
घर-घर दीप जल्यो खुशियों के,
मेरा मन अकुलाई।
भयो विधाता वाम हमीं पर
कहँ खोजौं हौं जाई।
आजु मोहिं पुरुषोत्तम सुधि आई।

—डॉ० रामचन्द्र तिवारी
गोरखपुर वि०वि० के
कृतकार्य आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
6 नवम्बर 2007

ज्योति जलती रहेगी

'भारतीय वाङ्मय' का प्रकाशन जनवरी 2000 ई० में प्रारम्भ हुआ। वह नयी सहस्राब्दी के प्रारम्भ का समय था। सम्पूर्ण विश्व में उसके शुभागमन के सन्दर्भ में विविध प्रकार के आयोजन किये जा रहे थे। साथ ही साथ एक विचार-मंथन का दौर भी छिट-पुट चल रहा था। विचारों तथा अक्षरों की दुनिया में एक विशेष प्रकार की हलचल थी। कहना जरूरी नहीं कि वह हलचल इस बात को लेकर थी कि नयी सहस्राब्दी की नयी-नयी चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में हमारी परम्परागत वैचारिकी कितनी कारगर एवं प्रभावी रहेगी?

विश्वविद्यालय प्रकाशन के अधिष्ठाता, वाङ्मय की सेवा के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित करने वाले अनुपम साहित्यसेवी तथा हमारे पूज्य पिताजी स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी ने नयी सहस्राब्दी के स्वागत के एक अनूठे तथा दूरगामी प्रभाव रखने वाले आयोजन की परिकल्पना की। छोटे कलेवर की एक बहुत बड़ी पत्रिका के रूप में उन्होंने 'भारतीय वाङ्मय' का प्रकाशन आरम्भ किया। यह वह समय था जब कि शारीरिक तौर पर वे क्षीण हो रहे थे। आंशिक पक्षाघात से वे पीड़ित हो चुके थे, किन्तु उनका उत्साह और मनोबल अद्भुत था। 'भारतीय वाङ्मय' के हित-चिन्तन में वे ऐसे तत्पर एवं तन्मय हो गए कि उनके पास अपनी रोग-व्याधि तथा कष्टों के विषय में सोचने का अवकाश ही नहीं रह गया। हम साफ देखते थे कि वे कष्ट में हैं। हम उनसे प्रार्थना करते थे—'पापा, थोड़ा आराम कर लीजिये।' किन्तु 'मैं ठीक हूँ' इस तरह आश्वस्त करते हुए लेखन, संशोधन, सम्पादन, सामग्री-संकलन तथा विविध प्रकार के कामों में वे लगे रहते। 'भारतीय वाङ्मय' के स्वास्थ्य के साथ उनका अपना स्वास्थ्य सहज सम्बद्ध हो गया था। चिंतन ओर लेखन की दुनिया में कहीं कुछ श्रेयस्कर होता तो वे अनायास खिल उठते थे और कहीं कुछ अवांछनीय घटता तो देर तक व्यथित रहते थे। दोनों ही दशाओं में उनकी अभिव्यक्ति स्पष्ट, दो टूक तथा बेलाग होती थी। इस मामले में वे ऐसे खाँटी बनारसी थे जो वाग्छल जानता ही नहीं।

वाराणसी से पत्रिका का प्रकाशन करते हुए वे इस नगर की महिमा से अभिभूत थे। प्रथमांक के सम्पादकीय में उनका कथन है—

''सहस्राब्दि के प्रथम दिवस पर त्रैमासिक 'भारतीय वाङ्मय' का प्रकाशन करते हुए हमें अपार प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। काशी भारतीय संस्कृति का प्राचीनतम केन्द्र है। इसमें समस्त भारत समाविष्ट है। इस नगर में देश के विभिन्न प्रदेशों का प्रतिनिधित्व है। इसी प्रकार काशी के घाट देश के विभिन्न प्रदेशों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। यहाँ के मुहल्लों तथा घाटों पर समस्त भारतीय भाषाएँ सुनने को मिल सकती हैं। यह विभिन्न भारतीय भाषाओं के विद्वानों की संगमस्थली भी है। 'भारतीय वाङ्मय' देश की समस्त भाषाओं, विशेषत: हिन्दी में अनूदित-प्रकाशित कृतियों की जानकारी देगा और उसकी चर्चा करेगा। इस प्रकार यह पत्रिका देश में बौद्धिक एकता स्थापित करने का प्रयास करेगी।''

शेष पृष्ठ 2 पर

पृष्ठ 1 का शेष

देश की बौद्धिक एकता—यह अपने आप में एक बहुत बड़ा लक्ष्य है और 'भारतीय वाङ्मय' के प्रतिष्ठापक स्व० मोदीजी की यह दृढ़ आस्था थी कि बौद्धिक एकता के स्वर युग-युग से काशी से ही सम्पूर्ण विश्व में गुंजायमान होते रहे हैं। उसी सम्पादकीय में वे कहते हैं—

''कबीर, तुलसी, रविदास और भारतेन्दु की नगरी काशी ने हिन्दी को बहुत कुछ दिया है और आज भी दे रहा है। धर्म, साहित्य और संस्कृति के समन्वित रूप के साथ काशी ने लोकमंगल का सन्देश दिया है। काशी से ही सबसे पहले केदार प्रभाकर और गोपाल चौबे के प्रेस से भारतीय साहित्य की लोकमंगलकारी रचना 'रामचरितमानस' का 1752 ई० में प्रकाशन हुआ था। काशी में मुद्रण-प्रकाशन का इतिहास लगभग ढाई सौ वर्षों का है। ऐसे नगर से 'भारतीय वाङ्मय' का सहस्राब्दि के अवसर पर प्रकाशन ऐतिहासिक घटना है। हम इस पत्रिका के माध्यम से काशी की परम्परा को भी अक्षुण्ण बनाये रखने का प्रयास करेंगे।''

लगभग आठ वर्ष पूर्व 'भारतीय वाङ्मय' के शुभारम्भ के अवसर पर कहे गए ये शब्द संस्थापक की संकल्पशक्ति के बल पर किस तरह अक्षरश: चरितार्थ हुए, यह बतलाने की हमें आवश्यकता नहीं है। हजारों विद्वान और पाठक इसका अनुभव करते हैं तथा समय-समय पर पत्रों के माध्यम से अपने उद्‌गार भी व्यक्त करते हैं। 'भारतीय वाङ्मय' का 2000 ई० में प्रकाशन सचमुच ऐतिहासिक घटना बन गया और पढ़ने-लिखने वाले तमाम लोगों के बीच इसी रूप में इसका स्मरण किया जाता है।

हिन्दी में पत्र-पत्रिकाओं की कमी नहीं है। अच्छे कलेवर और बहुत अच्छी साज-सज्जा के साथ सैकड़ों पत्र-पत्रिकाएँ देश-विदेश से प्रकाशित होती हैं। प्रकाशन-संस्थानों से भी अनेक पत्रिकाएँ निकलती हैं किन्तु वे प्राय: अपने प्रकाशनों के परिचय अथवा विज्ञापन को प्रमुखता देती हैं। 'भारतीय वाङ्मय' में भी हम अपने विश्वविद्यालय प्रकाशन की पुस्तकों के परिचय अथवा विज्ञापन के लिए स्थान सुरक्षित रखते हैं, किन्तु यह स्थान पत्रिका के चतुर्थांश से भी कम होता है। कहीं से कोई उत्कृष्ट पुस्तक अथवा पत्रिका प्रकाशित होती है और वह हमारे संज्ञान में लाई जाती है तो हिन्दी-जगत को उससे परिचित कराना हम अपना कर्त्तव्य मानते हैं। वाङ्मय-जगत तथा सम्पूर्ण विश्व में, और विशेषत: भारतीय परिदृश्य में, कहीं कुछ भी उल्लेखनीय घटित होता है तो उसको हम इस पत्रिका के पन्नों में वस्तुनिष्ठ एवं तटस्थ दृष्टि के साथ समेटने का प्रयत्न करते हैं।

हमें अतिशय प्रसन्नता होती है जब हम अनेक प्रतिष्ठित विद्वानों को 'भारतीय वाङ्मय' के अंकों को फाइल के रूप में सहेजकर सुरक्षित रखते हुए देखते हैं। उनका कहना है कि यह फाइल समकालीन साहित्यिक परिदृश्य के सन्दर्भ-ग्रन्थ के रूप में उपयोगी सिद्ध होती है। हमारे संस्थापक स्व० मोदीजी की सारग्राहिणी एवं सतत सजग दृष्टि तथा मौन साधना एवं निष्ठा के कारण ही यह सम्भव हुआ। देश-विदेश के अनगिनत मनीषियों, विद्वानों तथा आचार्यों का सौजन्य, साहाय्य एवं सद्‌भाव उन्हें सहज प्राप्त था। वे अपने स्तर पर सभी से सम्पर्क बनाये रखने में कभी चूकते नहीं थे।

'भारतीय वाङ्मय' के अब तक के गौरवशाली इतिहास पर हमें गर्व है और हमारा यह गौरव इसी प्रकार सदा-सर्वथा अक्षुण्ण बना रहे, यह हमारी अभिलाषा है। हम एतदर्थ संकल्पबद्ध भी हैं। किन्तु पत्रिका के आठवाँ वर्ष पूरा करते-करते 7 अक्टूबर 2007 को इसके स्वप्नद्रष्टा, शिल्पी तथा संस्थापक की छत्रछाया से सहसा वंचित हो जाने के कारण अपूरणीय रिक्तता की विकट स्थिति हमारे सामने उत्पन्न हो गई है। इस स्थिति से हम कैसे, कब और कितना उबर पाएँगे तथा आसन्न रिक्तता को कितना और किस तरह पूरा कर सकेंगे, यह तो आने वाला समय ही बतायेगा। हम केवल इतना कह सकते हैं कि हम इसके लिए पूरी शक्ति, निष्ठा तथा ईमानदारी के साथ प्रयत्न जारी रखेंगे। अपने संस्थापक के पुण्य-प्रताप पर हमें भरोसा है। हमें पूरा विश्वास है कि इस पत्रिका से अब तक सम्बद्ध समस्त विद्वानों, लेखकों और बुद्धिजीवियों का स्नेह, सद्‌भाव, मार्गदर्शन, सुझाव एवं साहाय्य हमें मिलता रहेगा। हमारा यह विश्वास यदि फलीभूत हुआ तो हम पाठकों को यह वचन देने की स्थिति में होंगे कि हमारे संस्थापक-सम्पादक स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी ने 'भारतीय वाङ्मय' की जो ज्योति जलाई, वह इसी प्रकार जलती रहेगी।

—सम्पादक

मैकाले अभी मरा नहीं

—सत्यनारायण मिश्र
(सम्पादक : *जीवन प्रभात,* मुम्बई)

15 अगस्त 1947 की रात बीबीसी के एक पत्रकार ने अंग्रेजी में आजादी पर जब उनकी प्रतिक्रिया जाननी चाही, तो गाँधीजी का उत्तर था—''कृपया दुनिया को खबर कर दें कि गाँधी अंग्रेजी भूल गया है।''

आजादी के 60 वर्षों में हम रात-दिन गाँधी की दुहाई देते-देते यहाँ आ पहुँचे हैं कि आज गली-गली में कुकरमुत्ते की तरह अंग्रेजी स्कूल पनप चुके हैं। इतना ही नहीं, उनकी आड़ में जो 'पंचतारा संस्कृति' फल-फूल रही है, उसका चित्र भी कम भयावह नहीं है। मुम्बई के इन कुछ संभ्रांत स्कूलों की फीस पर जरा नज़र डालिये—

एक स्कूल की फीस है : 7 लाख 90 हजार वार्षिक
दूसरे स्कूल की फीस है : 5 लाख 16 हजार वार्षिक
तीसरे स्कूल की फीस है : 3 लाख 90 हजार वार्षिक
चौथे स्कूल की फीस है : 3 लाख 49 हजार वार्षिक

ये कुछ नमूने हैं हमारे *कृषि-प्रधान गरीब* भारत देश के स्कूलों के! यह अन्धी दौड़ इसी तरह चलती रही, तो देश को 'गुलाम' बनाने के लिए न किसी ईस्ट इण्डिया कम्पनी की जरूरत पड़ेगी, न लॉर्ड मैकाले की। इन स्कूलों के 'होनहार' खुद-ब-खुद इस 'शुभ काम' को अंजाम दे देंगे।

क्या ऐसे स्कूलों में उच्च वेतनभोगी (एच० आई० जी०) परिवारों के बच्चे भी पढ़ सकते हैं? निम्न वेतनभोगी (एल०आई०जी०) या अन्य निर्धन परिवारों के बच्चों का तो सवाल ही नहीं उठता। 60 वर्ष की आजादी के बावजूद यदि हम अपनी शिक्षा-व्यवस्था को इस स्तर पर नहीं ला पाए कि राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री के और उनके चपरासी के बच्चे एक ही स्कूल में साथ-साथ पढ़ सकें, तो हमारी प्रगति की दिशा क्या है? संस्कृति या विमृति? जिस देश में कृष्ण और सुदामा सहपाठी रहे हों, उसे अन्यत्र देखने की आवश्यकता नहीं है। सिर्फ दृढ़ संकल्प लेकर कुछ करने की हिम्मत चाहिए।

हमारे नेता गाँधीवाद, समाजवाद, साम्यवाद या बहुजनवाद के झूठे नारे लगाकर लोगों को कब तक मूर्ख बनाते रहेंगे? क्या किसी एक नेता ने भी इस दिशा में कोई पहल की है? नहीं, तो अब समय आ गया है उनसे इसका दो-टूक जवाब माँगने का। हम हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहे, तो ये अवसरवादी नेता सारे खेत को ही चर जानेवाले हैं। इसलिए हम खुद पहल करें और दूसरों से करवायें वर्ना तो—

हर शाख़ पे उल्लू बैठे हैं, अंजामे गुलिस्तां क्या होगा?

श्रद्धा-सुमन

सहृदय साहित्यकार के स्वरूप मोदीजी

—प्रो० राजेन्द्र मिश्र,
(*पूर्व कुलपति,* सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी)

मेरे सम्मान्य अग्रज पुरुषोत्तमदास मोदीजी ने इहलीला-संवरण कर लिया, इस समाचार से मन सन्तप्त हो उठा। मोदीजी काव्य-शास्त्र विनोद में अहर्निश डूबे, सन्तहृदय महापुरुष थे। हिन्दी की पुरानी पीढ़ी के कालजयी साहित्यकारों, कवियों, लेखकों के प्रतिभालोक में उनका समय बीता था। फलत: उनकी अन्त:प्रज्ञा भी साहित्य की रसवत्ता में भींगी हुई थी। वह मूल्यवान संस्मरणों, घटनाओं एवं ऐतिहासिक स्मृतियों के जीवन्त कोष थे तथा किसी भी सम-सामयिक ज्वलन्त समस्या के विलक्षण नीरक्षीरविवेकी समीक्षक थे।

विश्वविद्यालय प्रकाशन के माध्यम से मोदीजी ने देववाणी संस्कृत एवं हिन्दी की जैसी उदात्त सेवा की, वह स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। सौभाग्यवश मैं भी उनसे जुड़ा तथा उनका स्नेहभाजन रहा।

मैं जानता हूँ कि पुरुषोत्तमजी पुरुषों में ही उत्तम नहीं थे, वह जनकोत्तम भी थे आप सबके लिए, मित्रोत्तम भी थे मित्रों के लिए! मोदीजी मात्र पाञ्चभौतिक देह से हमारे बीच नहीं, परन्तु अपने स्वभाव, वाणी तथा आदर्शों के माध्यम से वह पहले से भी अधिक हमारे साथ हैं। भगवान भूतभावन शिव उन्हें सायुज्य प्रदान करें।

मोदीजी मेरी दृष्टि में किसी भी विश्वविद्यालय-प्रोफेसर की तुलना में अधिक गहरी समझ एवं संवेदनावाले विद्वान् थे। वह ऐसे सद्गृही संन्यासी थे जो सरोवर में पुरइन के पात की तरह रहे। जल में रहते हुए भी जल से सर्वथा असम्पृक्त! जीवन के विवर्तों ने महामना पुरुषोत्तमदास मोदी को अनुभवों की आँच में पका दिया था। वह साधारण होते हुए भी असाधारण थे।

काशी में तीन साल रहा, परन्तु मेरा दुर्भाग्य था कि कभी उनके पास तीन घण्टे भी 'अनवरत' नहीं बैठ पाया। अभी भी मैं सपना देखा करता था कि एक बार काशी और आने को मिलेगा तो अबकी बार 'नरक' को 'स्वर्ग' बनाने की मुहिम छोड़ कर, आत्मोदय में लगूँगा। जम कर बैठूँगा आदरणीय भाई मोदीजी एवं काशी के कबीर डॉ० शुकदेव सिंह के साथ! परन्तु नियति-नटी का उपहास तो देखिए कि दोनों, आगे-पीछे चले गए।

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो मुक्ति के लिए यत्न करते हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं जो कभी बँधकर जीते ही नहीं। वे जीवनकाल में ही मुक्त होते हैं। प्रियवर अनुराग एवं परागजी! आपके पिताश्री एक ऐसे ही मुक्तात्मा थे। उनके लिए शोक कत्तई न करें क्योंकि उनके लिए हजारों-लाखों प्रियजनों ने शोक किया है, उनके शिव-सायुज्य हेतु प्रार्थनाएँ की हैं। इस स्वार्थान्ध कलि में भला ऐसा सौभाग्य कितनों को मिला है ? मरना उसी का सार्थक है जिसके लिए अपने ही नहीं 'पराये' भी रोएँ।

प्रकाशक, पुस्तक विक्रेता तथा उस व्यवसाय से धनकुबेर बननेवाले तो सम्भवत: मोदीजी से बड़े सैकड़ों लोग हैं, परन्तु मोदीजी का प्रकाशक होना, मुद्रक होना, उनका 'स्वरूप' लक्षण नहीं 'तटस्थलक्षण' था। उनका स्वरूप लक्षण तो उन्हें जयशंकर प्रसाद, प्रेमचंद, आचार्य हजारीप्रसाद, पं० बलदेव उपाध्याय सरीखी प्रतिभाओं का वारिस सिद्ध करता है। मोदीजी का वह सहृदय साहित्यकार का स्वरूप ही उनका शाश्वत एवं चिरन्तन रूप है।

अनमोल रत्न से बंचित हो गया

—लक्ष्मीधर मालवीय, *क्योटो (जापान)*

मोदीजी के आकस्मिक देहावसान की सूचना पाकर मेरे मन को बड़ा धक्का लगा। यहाँ उतरती शरद ऋतु है, वृक्षों पर से पानी-पानी झर रहा है, ऐसे में अपने यहाँ के किसी प्रियजन को खो बैठना, दूर परदेस में बस रहे व्यक्ति को और भी कितना अकेला कर जाता है, कैसे बताऊँ ?

कुछ समय होता है, यहाँ से आपके यहाँ फोन मिलाया। उनकी खनकती हुई आवाज़ सुनकर बड़ा संतोष हुआ था। बनारस में मेरा बचपन बीता है, भोजपुरी मेरी द्वितीय मातृभाषा है। बनारस के प्राणियों से मेरा मन आप ही जुड़ जाता है, वह और मैं तो समान आयुवर्ग के! पुराने बनारस के मोतीझील ज्योतिभूषण गुप्त के परिवार, 'रुद्र'जी की अन्य कृतियों, पण्डित सीताराम चतुर्वेदी के परिवार-जन के विषय में उनसे पूछताछ करने को सोच रहा था। मेरे परिवार में 'चंद्रकांता' या उस कोटि की पुस्तकें पढ़ने पर मनाही थी। नंदकिशोर एण्ड संस की दूकान के ठीक सामने एक पुस्तक-विक्रेता के यहाँ से मेरी माता ने मुझे एक पुस्तक ले दी थी, 'नानी की कहानी', बैजनाथ केडिया की, मुझे स्मरण है। 60-65 वर्ष हो गए। मोदीजी को लिखने को था कि इस बार आप मुझे वहाँ से 'नानी की कहानी' दिला दें। मैं आपसे सहुरा हूँ, हर दृष्टि से। इस 'दूसरे बेदांती बालपन' में उसे पुन: पढ़ना चाहता हूँ। पर मैं सोचता ही रह गया।

''धीवर जाल डाल का करिहै, जब मीन पिघल भई पानी!''

हाथ बाँध उस अपना माथा टिकाकर प्रणाम ही तो कर सकता हूँ पानी में एकाकार हो गई मीन को! ठीक ही तो कहा गया है, जो अपने लिए यश-कीर्ति की काया चुनते हैं, उनके लिए जरा-मरण का भय नहीं होता। मोदीजी ने विश्वविद्यालय प्रकाशन को चुना, उसे दुगुना-चौगुना विकास देना आपके लिए पितृऋण है, चुकाते रहें।

हिन्दी के प्रकाशकों को अब से और अधिक व्यापारकुशल होना ही चाहिए। मलयालम में 10 पीछे 9 पुस्तकें मलयाली भाषा की बिकती हैं। बंगला-मराठी में भी ऐसा ही है। मैं जानता हूँ, आप लोग स्वत: ही इस ओर सजग जागरूक हैं।

बहुआयामी व्यक्तित्व

—डॉ० श्रीप्रसाद

'भारतीय वाङ्मय' का नवम्बर 2007 अंक मिला, मोदीजी (श्री पुरुषोत्तमदास मोदी) की स्मृतियों से परिपूर्ण। बड़ी पीड़ादायी हैं ये स्मृतियाँ। पर 'काल बली' से कौन जीता है। मोदीजी चिंतक, विचारक, प्रकाशक, लेखक और समाजसेवी आदि बहुआयामी व्यक्ति थे। उनकी मुस्कराती छवि और हँस-हँसकर बातें करने का व्यक्तित्व हर उस व्यक्ति के मन में रहेगा जो उनसे मिला है। 2 अक्टूबर 2007 को गाँधी जयन्ती के अवसर पर उन्होंने हँसकर ही कहा था—''अब मैं दुकान पर आने लगा हूँ। आइएगा।'' वे कुछ दिनों से पैर के कष्ट के कारण घर पर ही रहकर काम कर रहे थे।

सन् 1963-64 की बात होगी, बाल साहित्य में रुचि होने के कारण मैं विश्वविद्यालय प्रकाशन बच्चों की पुस्तकों के लिए जाया करता था। पराग, नंदन, बालभारती और चंपक आदि में मेरी बालोपयोगी कविताएँ प्रकाशित हो रही थीं। पर मेरा कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ था। मैंने अनेक प्रकाशकों से बात की। सबका एक ही उत्तर था—''हमारे पास पहले से पाण्डुलिपियाँ हैं।'' थक हारकर मैंने प्रयास करना छोड़ दिया यह मानकर कि मुझे कोई प्रकाशित नहीं करेगा। इसी बीच मोदीजी ने कहा—''क्या आप बच्चों के लिए कुछ लिखते हैं ?'' मेरे कविता लिखने की बात कहने पर उन्होंने मेरी कविताएँ देखने की जिज्ञासा की। उनमें भरपूर साहित्य का संस्कार था। कविताएँ देखकर उन्होंने चालीसेक कविताओं का एक संकलन देने को कहा। मेरी बहुत बड़ी मुराद पूरी हो रही थी। यह सोचकर कि यह मेरा पहला और अन्तिम संकलन है। मैंने तैंतालीस कविताओं में सात-आठ शिशु गीत भी डाल दिए, जिससे पाठक दोनों प्रकार की रचनाओं की बानगी पा सकें।

पुस्तक प्रकाशित हुई। दो साल बाद उसे केन्द्र का अखिल भारतीय बाल-साहित्य-पुरस्कार प्राप्त हुआ। तब मोदीजी ने शिशु-गीतों का संकलन देने को कहा। इसे उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का पुरस्कार प्राप्त हुआ। अनंतर मोदीजी मेरे बालोपयोगी नाटक, कहानियाँ, बाल-कविताएँ और शिशु-गीत-संकलन प्रकाशित करते चले गए।

फिर तो अनेक प्रकाशकों ने बाल साहित्य की विविध विधाओं की मेरी पुस्तकें प्रकाशित कीं। विश्वविद्यालय प्रकाशन से प्रकाशित 'आ री कोयल' को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का सर्वोच्च कृति-पुरस्कार प्राप्त हुआ।

श्री पुरुषोत्तमदास मोदी मात्र प्रकाशक ही नहीं, सहृदय व्यक्ति भी थे। मैंने ऐसा कोई दूसरा प्रकाशक, दूसरा सहृदय मानव नहीं देखा। इसीलिए वे मुझे सदा याद आते रहेंगे।

याद आता है वह कवि सम्मेलन !

—डॉ० बुद्धिनाथ मिश्र

मुख्य प्रबन्धक (राजभाषा), ओ०एन०जी०सी०

'भारतीय वाङ्मय' का पुरुषोत्तमदास मोदी श्रद्धांजलि अंक प्राप्त हुआ। मोदीजी के बारे में साहित्यकारों/विद्वानों के संस्मरण एवं विचार पढ़कर कुछ देर तक मोदीजी की खूबियों के बारे में सोचने के लिए बाध्य हो गया।

मेरा प्रथम परिचय मोदीजी से तब हुआ, जब उन्होंने रोटरी क्लब की ओर से तीन दिनों का अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का आयोजन किया था। यह सम्भवत: 1970 की बात है। डॉ० शंभुनाथ सिंह की सिफारिश पर मोदीजी ने मुझे उस कवि सम्मेलन में सबसे अल्पवय के कवि के रूप में शामिल किया था। कवि सम्मेलन में उस समय के सभी शीर्षस्थ कवि आमंत्रित थे। जिसने कवि सम्मेलन को तीनों रात सुना, उसे समकालीन हिन्दी कविता के सभी रंगों और तेवरों का परिचय मिल गया। उस कवि सम्मेलन में काव्यपाठ करना गौरव और प्रतिष्ठा की बात थी। इसलिए बनारस के जिन कवियों को उस मंच पर आने में सफलता नहीं मिली, उनके तीव्र रोष का सामना भी मोदीजी को करना पड़ा। उन्होंने उसे सहन किया, मगर कवि सम्मेलन की गुणवत्ता में गिरावट नहीं आने दी।

उसके बाद से आज तक मेरा उनके साथ अत्यन्त सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध रहा। 'आज' के सम्पादकीय विभाग में काम करते हुए मैं जब भी चौक की ओर रुख करता, विशालाक्षी भवन में जाकर उनसे भेंट जरूर करता। वे अत्यन्त विनम्र, सहनशील और गहन अध्येता थे। मैंने कई बार उनसे दुर्लभ पुस्तकों के बारे में जानकारी ली। उनका स्नेहशील व्यवहार मुझे बराबर उनकी ओर खींचता था। यहाँ तक कि बनारस छोड़कर कलकत्ता चले जाने के बावजूद उनके स्नेहपूर्ण और लेखन की प्रेरणा देनेवाले पत्र मुझे मिलते रहे और जब भी मैं बनारस आता, उनसे मिलना मेरे लिए जरूरी हो जाता। बनारस के दो प्रकाशक—कृष्णचंद्र बेरी और पुरुषोत्तमदास मोदी हिन्दी ही नहीं, पूरे भारतीय प्रकाशन जगत् के दो देदीप्यमान नक्षत्र हैं। मोदीजी के विचारों, लेखों, रचनाओं का संकलन होना बहुत जरूरी है। 'भारतीय वाङ्मय' में उनका सम्पादकीय मेरे लिए हमेशा संग्रहणीय रहा है।

मेरे प्रेरणास्त्रोत मोदीजी

—डॉ० एन०ई० विश्वनाथ अय्यर, *तिरुवनंतपुरम्*

'साहित्य अमृत' मेरी प्रिय साहित्यिक पत्रिका है। उसका सम्पादकीय, कहानियाँ, व्यंग्य, प्रत्येक स्तम्भ प्रेम से पढ़ता हूँ। लेकिन कभी-कभी वह दु:खदायी सूचनाओं से मन को व्यथित करती है। इस बार उसमें प्रकाशित श्री पुरुषोत्तमदास के प्रति श्री बदरीनाथ कपूर की श्रद्धांजलि ने अपने परिवार के घनिष्ठ व्यक्ति के स्वर्गवास का सा अनुभव कराया। आदरणीय मोदीजी से मेरा सम्बन्ध वर्षों पुराना है।

मेरा सामान्य परिचय हिन्दी-जगत के कुछ प्रमुख प्रकाशकों से है। प्रत्येक प्रकाशक में उनकी अपनी कुछ विशेषताएँ पाई हैं। वैसे काशी नगरी में गली-गली में मन्दिर और प्रकाशक मिले। किन्तु श्री मोदीजी उनके सिरमौर थे। उन्होंने निश्चित प्रकाशन-नीति बनाई थी। काशी नगरी के विविध आयामों पर उन्होंने गम्भीर अनुसंधानप्रधान ग्रन्थ प्रकाशित किये। महामनीषी गोपीनाथ कविराज जैसे पण्डितों से ग्रन्थ लिखाकर प्रकाशित करने का श्रेय उन्हीं को है। काशी के वातावरण और अपनी रुचि के अनुकूल उन्होंने संस्कृत साहित्य और धार्मिक साहित्य भी प्रकाशित किया।

मेरा उनसे प्रथम परिचय केरल विश्वविद्यालय के प्राध्यापक के रूप में हुआ। उन्होंने अवलोकनार्थ प्रयोगवादोत्तर कविताओं का गम्भीर संकलन भेजकर चकित कर दिया। उनकी साहित्यिक रुचि के विविध आयाम देखकर मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ। हमने उक्त संकलन वर्षों तक एम०ए० में पढ़ाया। इसके फलस्वरूप हमारे छात्र उत्तर भारत के छात्रों की अपेक्षा नवीन कविता से अधिक अवगत होते गए। इसी प्रकार मोदीजी ने केन्द्रीय हिन्दी संस्थान की सहभागिता में 'मध्यकालीन काव्यसंग्रह', गद्य संग्रह, एकाकी संग्रह आदि उत्तम पाठ्यग्रन्थ प्रकाशित किए। उनके प्रकाशन स्वच्छ, त्रुटिरहित एवं परिमार्जित रुचि की साज-सज्जा से युक्त होते थे।

मोदीजी में लेखकों को तैयार करने की भी बड़ी क्षमता थी। हमारे परिचय की प्रारम्भिक अवस्था थी। तब भी उन्होंने मेरा छोटा-सा किन्तु शोधपरक ग्रन्थ 'राष्ट्रभारती को केरल का योगदान' सहर्ष प्रकाशित किया। वह एक छोटी-सी परियोजना का शोधकार्य था, पर प्रथम था। उस प्रकाशन ने मुझे हिन्दी-जगत में सम्मान दिया।

वर्षों बाद मैं अवकाशग्रहण कर रहा था। मैंने सोचा, यूजीसी को एक योजना भेजूँ। उसी समय मोदीजी का प्रेमपूर्ण पत्र आया कि केरल पर आपकी छोटी पुस्तक समाप्त है। आप 'केरल में हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास' पर नया विस्तृत ग्रन्थ लिखें। मेरी इच्छा उनके प्रोत्साहन से प्रबल हुई। प्रभु की कृपा से योजना स्वीकृत हुई। चार वर्षों की साधना से ग्रन्थ पूरा हो गया और मोदीजी ने एक आदर्श प्रकाशन प्रस्तुत किया। मुझे यह कहते प्रसन्नता हो रही है कि उक्त ग्रन्थ का सन्दर्भ अनेक विद्वान देते हैं। मेरी यह शिकायत भी है कि हिन्दी प्रदेश के विश्वविद्यालय एवं हिन्दी विद्वान केरल जैसे प्रदेश के हिन्दी साहित्य को जानने और पढ़ने में कम रुचि लेते हैं। अन्यथा उक्त ग्रन्थ के कई संस्करण छप गए होते।

मुझे सेवाकाल में तथा बाद में भी विविध प्रसंगों पर काशी जाने का सुयोग मिलता था। अधिकांश बार मैं विशालाक्षी भवन जाकर मोदीजी से मुलाकात करता था। वे छोटी-मोटी मदद भी करते थे। यात्राएँ कम होने पर हमारा सम्पर्क पत्राचार से होता था।

'भारतीय वाङ्मय' का प्रकाशन मोदीजी ने जब प्रारम्भ किया तब से वे नियमित रूप से मेरे पास अंक भिजवाते थे। उनके संस्मरण और टिप्पणी बेजोड़ थे। उन्हें पढ़कर मैं अभिभूत होता था। कभी वे और कभी उनके पुत्र अनुराग मोदी पत्र देते थे। पारिवारिक सम्बन्ध-सा जुड़ गया। अब एकाएक वे भाई हमसे सदा के लिए बिछुड़ गये। काशी के प्रकाशन-जगत में उनका स्थान वर्षों तक रिक्त ही रहेगा। उस दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए हृदय से प्रार्थना करता हूँ।

अपूरणीय क्षति

—डॉ० भवानीलाल भारतीय, *जोधपुर*

हिन्दी भाषा और साहित्य के विश्वव्यापी क्षेत्र में यह समाचार शोक के साथ सुना जाएगा। मोदीजी ने विश्वविद्यालय प्रकाशन के माध्यम से साहित्य संसार को जिस प्रकार समृद्ध किया वह सचमुच आश्चर्यजनक है। ललित तथा ज्ञानप्रधान साहित्य के साथ-साथ धर्म, दर्शन, संस्कृति और इतिहास आदि विभिन्न विद्याओं की शतश: उच्च कोटि की कृतियों को प्रकाशित कर उन्होंने प्रकाशन-व्यवसाय में अद्‌भुत क्रान्ति की थी। प्रकाशक के अतिरिक्त सहृदय लेखक तथा समीक्षक के रूप में उनकी सराहनीय भूमिका पाठकों को प्रभावित करती थी। वे लेखकों को प्रेरित कर साहित्य-रचना कराते थे। प्रो० कल्याणमल लोढ़ा की प्रेरणा से उन्होंने मुझे स्वामी दयानन्द की जीवनकथा को लिखने का आदेश दिया था। साहित्यकारों के रोचक संस्मरणों को ग्रन्थबद्ध करने का जब उनका आदेश मुझे मिला तब यह एक रोचक कृति का रूप लेकर पुस्तककार पाठकों के समक्ष आने को है। जीवन और मृत्यु यद्यपि दैवाधीन हैं तथापि मोदीजी का निधन हिन्दी भाषा और साहित्य की ऐसी क्षति है जिसे तुरन्त भरा जाना शक्य नहीं है।

वह हँसी बहुत कुछ कहती थी...

—श्रीप्रकाश शुक्ल
(*हिन्दी विभाग,* काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी)

आज एकेडमिक स्टाफ कालेज के पुनश्चर्या पाठ्यक्रम से वापस आने के बाद मुझे 'भारतीय वाङ्मय' का अंक मिला। अंक पाते ही मुझे लगा कि जैसे मैंने मोदीजी को पा लिया है। मोदीजी का जाना मेरे लिए व्यक्तिगत क्षति जैसा रहा है।

कुछ दिन पहले उनके 80वें जन्मदिन पर मैं उनके आवास पर (19 अगस्त 2007) मिला था। उनसे ढेरों बातें हुई थीं। उनसे यह भी कहा था कि ''आप ऐसे 'प्रकाशक' हैं जो वास्तव में लेखकों को प्रकाशित करते हैं। आप कृतियों को बेचते ही नहीं, उन्हें संवाद के लिए आमंत्रित करते हैं।'' मोदीजी यह सब सुनकर खुश हुए थे। मैंने जब उनसे कहा था कि आपके 80 वर्ष पूरा होने पर हम यहाँ साहित्यिक समाज की ओर से एक भव्य आयोजन करेंगे, तब वे मुस्कुराये थे। लगभग लजाते हुए कहा था कि ''बस इतना ही दुआ करें कि यह पूरा कर सकूँ।'' और यह कहते हुए उन्होंने उसी दिन 'गाण्डीव' में प्रकाशित एक लेख को मेरी ओर बढ़ा दिया था, चुपचाप।

लेख के जिस हिस्से पर मेरा सबसे पहले ध्यान गया, वह था—''यदि मैं मरूँ तो चाहता हूँ काशी में मेरा पुनर्जन्म हो''। मैं चुपचाप पूरा लेख पढ़ गया, लेकिन ध्यान मेरा इसी वाक्य में उलझा हुआ था। इसके बाद मोदीजी ने धीरे से मुझसे पूछा—''कैसा लगा?'' मैंने तपाक से कहा—''भरा और भारी''।

बात वहीं खत्म हो गयी। वहीं पर बैठे उनके प्रियजनों से मैं मोदीजी पर अनामंत्रित ढंग से बोलने लगा। पता नहीं कैसा आवेग था, कैसा भय था कि उनके सामने मोदीजी के व्यक्तित्व के सैकड़ों पहलू को एक-एक कर उजागर कर डाला। ऐसा लगा कि जैसे अब कह नहीं पाऊँगा। इसलिए सब कह डालना चाहिए। यह मेरे अचेतन मन की पुकार थी, शायद भविष्य का भय था, या फिर मोदीजी के प्रति अतिशय सम्मान! कहना कठिन है, लेकिन आज जब सोचता हूँ तब लगता है कि मोदीजी को लेकर उस समय मैं कुछ ज्यादा ही 'कांसस' हो गया था। वहाँ से जब चलने लगा तब मोदीजीने कहा था—''ऐसे ही आते रहियेगा। आपसे बात करके मैं अपने को युवा महसूस करने लगता हूँ।''

सचमुच मोदीजी हमसे बात करते युवा हो जाते थे। जितनी सूचनाएँ, ज्ञानसम्बन्धी नयी जानकारियाँ उनके पास रहती थीं, शायद ही हिन्दी के किसी लेखक के पास रहती हों। प्रकाशकों के पास तो सम्भव ही नहीं है। वे हमें हमेशा 'उकसाते' रहते। तरह-तरह की पुस्तकों की जानकारी देते। ऐसा ही एक वाकया था जब मैं 14 जुलाई 2007 को पहली बार उनके स्वास्थ्य की जानकारी के लिए उनके गायघाटस्थित आवास पर गया। वे राजस्थान के राजेन्द्र केडिया द्वारा लिखित 'जाट रे जाट' नामक पुस्तक का जिक्र कर रहे थे। उसके हिस्से का पाठ कर रहे थे और हँस रहे थे। फिर उन्होंने कांतिकुमार जैन के संस्मरणों का जिक्र करना शुरू कर दिया। फिर 'प्रसाद' पर बोलते रहे। फिर आये महादेवी पर और 'कूड़ा विवाद' की चर्चा करने लगे। उसी समय 'वागर्थ' में छपे (जुलाई अंक) मेरे लेख 'नामवर सिंह का कूड़ा विवाद' के कुछ अंश को पढ़कर सुनाने लगे। फिर कहा कि महादेवी के साथ, नामवर के बहाने ही सही आपने कुछ न्याय किया है। हाँ, पंत के साथ थोड़ा सख्त ज्यादे ही हो गये हैं।

तो ये थे मोदीजी। कितना बताऊँ। मैं तो 2005 के पहले गाजीपुर में था। वहाँ से जब भी फोन करता, मोदीजी स्नेह से बात करते और हर दुर्लभ किताब को सुलभ बनाते। मुझे 'ऐसे ही लिखते रहने की' सदा ही प्रेरणा देते रहते और यह भी कहते कि 'धैर्य मत खोना। गाजीपुर जल्दी छूटेगा'। गाजीपुर छूटा भी। बनारस आकर मोदीजी को निकट से जानने का अवसर मिला। उनका अपार स्नेह तो पहले से ही था। यहाँ आने पर छलकने लगा। कहीं भी मैं कोई आयोजन करता, कहीं भी कुछ लिखता, मजाल है कि वह उनसे ओझल हो। वे हमारे हर आयोजन में मानसिक रूप से उपस्थित रहते। मुलाकात होने पर बीएचयू के हिन्दी विभाग की खूब चर्चा करते। अकसर यह कहते कि हिन्दी विभाग के कम ही प्राध्यापक हैं जो किताबों को खरीदते व पढ़ते हैं। वे पाठ्यक्रम को बदलने से लेकर नयी से नयी पुस्तकों का जिक्र करते और बातचीत करते अकसर अपने अतीत में फलांगते। उन्हें इस बात से क्षोभ होता कि लेखक-प्रकाशक के रिश्ते अब टूट गये हैं। हम लोगों को, नये लोगों को, एक उम्मीद से देखते।

मोदीजी के अध्ययन व चिंतन का प्रमाण उनके द्वारा सम्पादित 'भारतीय वाङ्मय' रहा है। जितनी दुर्लभ सूचनाएँ यहाँ होतीं, हिन्दी भाषा की किसी भी पत्रिका में नहीं मिलतीं। सम्भव है कि अन्य भाषाओं में भी न हो। आश्चर्य होता था कि इतनी सूचनाएँ, इतनी मजेदार घटनाएँ वे कैसे इकट्ठा करते थे। एक दिन उनसे पूछा कि यह सब कैसे सम्भव होता है? उन्होंने तुरन्त कहा—'जीवन से'। मतलब यहाँ जिजीविषा से है। वे कई घण्टे काम करते। तरह-तरह के अखबार व पत्रिकाएँ पढ़ते। हम कहीं भी छपे हों, वह हमारी नज़र से ओझल हो सकता था, मोदीजी की नज़र से नहीं।

इस सन्दर्भ में बनारस को लेकर उनमें अगाध प्यार था। बनारस की छोटी-सी खबर को भी वे बड़ी बनाकर छापते। अगर वह बड़ी है तब तो पूछना ही क्या! यहाँ प्रमाणस्वरूप 28 जुलाई 2007 को 'अस्सी के नामवर' के नाम से आयोजित कार्यक्रम को हम ले सकते हैं। इसको मोदीजी ने तीन महीने तक लगातार खबरों में रखा और इतना 'ब्रेक' दिया कि कई लोग ईर्ष्या से भर उठे। इस सन्दर्भ में उनसे अन्तिम बार मेरी बात 5 अक्टूबर 2007 को हुई थी। उनके हालचाल लेने के सिलसिले में मैंने फोन किया था और बताया कि 8 अक्टूबर को मेरा 'रीडरशिप' का साक्षात्कार है। उसके बाद मैं आपसे मिलूँगा। उन्होंने सबसे पहले तो राजकमल से सद्य: प्रकाशित मेरे कविता-संग्रह 'बोली बात' पर बधाई देते हुए कहा कि इसकी कई कविताओं को मैंने पढ़ डाला है। साथ ही मेरी पुस्तक 'नामवर की धरती' के बहाने एक मजेदार व्यंग्य सुनाया और जितना ही सुनाते थे, उतना ही हँसते थे।

कोई छात्र उनके पास गया, सम्भवत: काशी विद्यापीठ के एम०ए० का छात्र। उसने कहा—''सुना है कि नामवर सिंह ने श्रीप्रकाश शुक्ल पर कोई किताब लिखी है।'' पहले तो मोदीजी चौंके। फिर उससे पूछा—''क्या कहा?'' छात्र ने फिर उसे ही दुहराया। मोदीजी ने आश्चर्य व कौतूहल से उसे पास बुलाया व बैठा लिया। 'नहीं' भाई, श्रीप्रकाश शुक्ल ने नामवर सिंह पर किताब लिखी है। ऐसा नहीं हो सकता। मेरी सूचना गलत नहीं हो सकती। मेरे गुरुजी ने बताया है, छात्र ने कहा। मोदीजी ने उसे बताया, समझाया। फिर भी जब वह नहीं माना, तब पुस्तक लाकर दिखा दिया। छात्र ने उलटा-पुलटा। फिर धीरे से खड़ा हो गया। मोदीजी ने कहा—''क्या हुआ?''''यह तो मेरे किसी काम काम की नहीं है'' छात्र ने कहा। इस पूरे वाकिया का मोदीजी जितना बयान करते थे, उतना ही हँसते थे। उन्होंने यह भी बताया कि नवम्बर के अंक में यह जा रहा है।

लेकिन वह मनहूस नवम्बर कभी नहीं आया। अब मोदीजी की हँसी भी नहीं है। विश्वविद्यालय प्रकाशन इधर जाना नहीं हुआ। सोचता हूँ कि जाऊँगा तो कैसे उस कुर्सी को देख पाऊँगा जो मोदीजी के बिना निष्प्राण पड़ी होगी। लोग कहते हैं कि अपनों के जाने से दीवारें भी बोलती हैं। तब तो कुर्सी भी बोलेगी और मैं क्या जवाब दूँगा? कैसे कहूँगा कि तुम्हें उन्हें 19 अगस्त तक तो रोक ही लेना चाहिए था। मैं जैसे भी यह सब कहूँगा। वह मुस्कुरायेगी। जब यह जवाब देगी—''जाने वाले को कौन अब तक रोक पाया है।'' तब मैं क्या कहूँगा कि ''घिर रहा तम आज दीपक रागिनी अपनी जगा लूँ''।

मोदीजी मुक्त हो गये हैं। वे काशी में ही हैं। हम सबके बीच। अपनी इच्छा के मुताबिक। लेकिन 'दीपक रागिनी' तो आपको जगाना है। इसमें हमारे लायक जो कुछ भी होगा, हम आपके साथ हैं।

संगोष्ठी/लोकार्पण

पत्रकारिता की आठ पुस्तकों का लोकार्पण

पिछले दिनों *माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय* द्वारा प्रकाशित *आठ पुस्तकों*—साहित्यिक पत्रकारिता, राजनीतिक पत्रकारिता, विज्ञान पत्रकारिता, भारतीय एलेक्ट्रॉनिक मीडिया, प्रेस विधि एवं अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य, आर्थिक पत्रकारिता, फिल्म पत्रकारिता और फोटो पत्रकारिता का लोकार्पण इण्डिया इण्टरनेशनल सेण्टर में आयोजित समारोह में किया गया। मीडिया के विविध पक्षों से सम्बन्धित इन पुस्तकों के प्रकाशन के अवसर पर कुलपति **श्री अच्युतानंद मिश्र** ने बतलाया कि आजादी के बाद की पत्रकारिता के इतिहास को पूरी तरह से कलमबद्ध करने के लिए उनका विश्वविद्यालय प्रयासरत है। इस अवसर पर वरिष्ठ पत्रकार आलोक मेहता, ज्योतिष जोशी, डॉ० मनोज पटेरिया, आलोक पुराणिक, डॉ० हरिवंश दीक्षित, विनोद तिवारी, डॉ० देवव्रत सिंह और नवल जायसवाल को सम्मानित किया गया।

पाँच पुस्तकों का सामूहिक लोकार्पण

विगत 1 नवम्बर 2007 को नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा बनारस के बेनियाबाग में आयोजित 31वें राष्ट्रीय पुस्तक मेले में राजकमल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित *प्रतिष्ठित आलोचक* **बच्चन सिंह** की पुस्तक 'उपन्यास का काव्यशास्त्र', *चर्चित युवा कवि* **श्रीप्रकाश शुक्ल** का कविता संग्रह 'बोली बात' तथा *प्रसिद्ध कोश वैज्ञानिक* **बदरीनाथ कपूर** द्वारा तैयार की गयी 'योग वासिष्ठ', 'हिन्दी प्रयोग' तथा 'कोशकला' नामक पुस्तकों का लोकार्पण किया गया।

बच्चन सिंह की पुस्तक 'उपन्यास का काव्यशास्त्र' का लोकार्पण करते हुए प्रसिद्ध कथाकार काशीनाथ सिंह ने कहा कि इस पुस्तक में पहली बार 'कथा साहित्य' के फार्मेट पर खुलकर विचार किया गया है। उन्होंने कहा कि सौ वर्षों के कथा साहित्य के इतिहास में समृद्ध होते कथा साहित्य में उसका शिल्प जैसे-जैसे बदलता है बच्चन सिंह ने इस पुस्तक में उन सभी सन्दर्भों को रेखांकित करने की कोशिश की है। इस अवसर पर उन्होंने यह भी कहा कि अच्छी पुस्तक वह होती है जो अपने नाम से आकर्षण पैदा करती है। यह पुस्तक कुछ वैसी ही है लेकिन यहीं पर जोर देकर कहा कि नाम के आकर्षण के साथ इस पुस्तक में कथ्य की विराटता भी है।

श्रीप्रकाश शुक्ल के कविता संग्रह 'बोली बात' का लोकार्पण करते हुए प्रसिद्ध आलोचक बच्चन सिंह ने कहा कि श्रीप्रकाश शुक्ल का यह दूसरा संग्रह उनके पहले कविता संग्रह 'जहां सब शहर नहीं होता' की तुलना में एक प्रस्थान तो है ही, साथ ही यह समकालीन काव्य लेखन में एक छलांग भी है। यहाँ तक आते-आते श्रीप्रकाश शुक्ल अपने काव्यबोध के साथ अपनी भाषा भी पा चुके हैं। संग्रह 'बोली बात' की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि इसमें नागर संस्कृति के बरअक्स एक देशज मन है और यहाँ स्वीकार के अस्वीकार का साहस भी मौजूद है। यहाँ कविता में एक प्रजातांत्रिक व सामाजिक स्पेस बनाने की विनम्र कोशिश भी है। यहाँ स्मृति के बरअक्स एक कठिन कवि जिद है जहाँ स्मृति लगातार समकालीन विमर्शों से टकराती चलती है। इस अवसर पर उन्होंने आगे कहा कि पूर्वांचल की संस्कृति इस संग्रह में पहली बार कविता के रूप में बोलती नजर आती है जहाँ एक ठेठ बनारसीपन भी है। इसकी भाषा को देशज व खुरदुरी बताते हुए कहा कि यही इस संग्रह को अलग से पहचान देता है। इस अवसर पर उन्होंने संग्रह की 'हड़परौली', 'मनिहार', 'नये घर में', 'मित्रता', 'पुतली', 'प्रभु से प्रार्थना' तथा 'एक सुबह की उदासी' जैसी कविताओं की प्रशंसा की।

बदरीनाथ कपूर की तीन पुस्तकों—'हिन्दी प्रयोग', 'कोशकला' तथा 'योग वासिष्ठ' का एक साथ लोकार्पण करते बच्चन सिंह ने कपूर साहब के ऐतिहासिक योगदान की प्रशंसा करते हुए कहा कि कोश निर्माण में इनका योगदान अप्रतिम है। किसी भी भाषा की समझ के लिए 'कोश निर्माण' महत्त्वपूर्ण होता है और हिन्दी भाषा में यह कार्य कपूर साहब ने किया है। इस अवसर पर 'योग वासिष्ठ' की अलग से चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि इसको जिस तरह से 365 दिनों में बाँटा गया है। उससे जीवन में एक अनुशासन तो आता ही है, साथ ही एक सुन्दर समाज का स्वप्न भी निर्मित होता है।

पुस्तकालयों, शिक्षा संस्थाओं

के लिए

साहित्यिक तथा विभिन्न विषयों की हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत पुस्तकों का विशाल संग्रह

तीन हजार वर्ग फुट में विशाल शोरूम

विश्वविद्यालय प्रकाशन

विशालाक्षी भवन, चौक
(चौक पुलिस स्टेशन परिसर के पार्श्व में)
वाराणसी - 221 001 (उ०प्र०)
Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082
E-mail: sales@vvpbooks.com

सम्मान-पुरस्कार

पं० रेवा प्रसाद को विश्वभारती सम्मान

वाल्मीकि जयन्ती के अवसर पर विगत 26 अक्टूबर को लखनऊ में उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान ने अपने वार्षिक पुरस्कार प्रदान करने के लिए संस्कृत के कई ख्यातिप्राप्त विद्वानों को वाल्मीकि रंगशाला में आमंत्रित किया था। प्रदेश के संस्कृति एवं नगर विकास मंत्री नकुल दुबे ने संस्थान के सर्वोच्च पुरस्कार 'विश्वभारती' (2.51 लाख रु०) से वाराणसी के विद्वान **प्रो० रेवा प्रसाद द्विवेदी** को पुरस्कृत किया। 'महर्षि वाल्मीकि पुरस्कार' (एक लाख रु०) वहीं के प्रो० वशिष्ठ त्रिपाठी को एवं 'महर्षि व्यास पुरस्कार' (एक लाख रु०) गुड़गाँव के प्रो० श्रीधर वासिष्ठ को दिया गया। 'नारद पुरस्कार' (51 हजार रु०) कानपुर के डॉ० प्रकाश मिश्र शास्त्री को दिया गया।

51 हजार रुपये की पुरस्कार-राशि वाले पुरस्कार से पारसनाथ द्विवेदी, शिवजी उपाध्याय एवं विमला कर्नाटक (सभी वाराणसी), शिवसागर त्रिपाठी एवं भाष्कराचार्य त्रिपाठी (भोपाल) को पुरस्कृत किया।

25 हजार रुपये की पुरस्कार-राशि वाले वेद पण्डित पुरस्कार चमनलाल त्रिवेदी, मनोज कुमार पाण्डेय, शिवाकान्त पाण्डेय, चिन्तामणि शुक्ल और शिवशक्ति प्रसाद द्विवेदी (सभी वाराणसी), भाष्कर देव मिश्र एवं विनय कुमार त्रिपाठी (दोनों बस्ती), रंगनाथ त्रिपाठी (गोरखपुर), लखी ढकाल (इलाहाबाद), महेश तिवारी (गाजियाबाद) को तथा इतनी ही पुरस्कार राशिवाले पाणिनी पुरस्कार से हरिनारायण तिवारी (जम्मू) और सायण पुरस्कार से रामराज उपाध्याय (दिल्ली) को पुरस्कृत किया गया।

संस्थान के विशेष पुरस्कार अनीता सोनकर, ओमप्रकाश पाण्डेय एवं लोकमान्य मिश्र (सभी लखनऊ) और इला घोष (जबलपुर) को तथा विविध पुरस्कार से डॉ० विजय कुमार कर्ण, रामसुमेर यादव (दोनों लखनऊ) और गंगाधर पण्डा (वाराणसी) को पुरस्कृत किया गया।

हरिशंकर परसाई सम्मान
डॉ० कान्तिकुमार जैन को

हरिशंकर परसाई के अभिन्न सहचर **डॉ० कांतिकुमार जैन** को होशंगाबाद के जमानी ग्राम में ग्रामवासियों द्वारा 'हरिशंकर परसाई सम्मान 2007' प्रदान किया गया। हिन्दी साहित्य के गहन अध्येता श्री जैन डॉ० हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर में हिन्दी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष रहे हैं। श्री जैन ने संस्मरण साहित्य की विधा को पुनर्प्रतिष्ठा प्रदान की है। परसाई पर उनकी पुस्तक 'तुम्हारा परसाई' परसाई-प्रेमियों के लिए सन्दर्भ ग्रन्थ की हैसियत रखती है।

प्रियंवद को कथाक्रम सम्मान

वर्ष 2007 का आनन्द सागर स्मृति कथाक्रम सम्मान चर्चित कथाकार **प्रियंवद** को दिया गया। 55 वर्षीय प्रियंवद पिछले ढाई दशक से कथा सृजन में रत हैं एवं हिन्दी कथासाहित्य के चर्चित रचनाकार हैं। अब तक इनके दो उपन्यास, तीन कहानी-संग्रह व इतिहास की एक पुस्तक 'भारत विभाजन की अंतर्कथा' प्रकाशित हो चुके हैं। 'परछाईं नाच' एवं 'वे वहाँ कैद हैं' उनके चर्चित उपन्यास हैं। उनके कहानी-संग्रह में 'अपवित्र पेड़', 'खरगोश' तथा 'फाल्गुन की एक उपकथा' शामिल है। 'फाल्गुन की एक उपकथा' पर 'अनवर' एवं खरगोश पर इसी नाम से फिल्म का निर्माण हो रहा है। साहित्यिक पत्रिका 'अकार' का वर्ष 2001 से प्रियंवद प्रकाशन कर रहे हैं।

यह सम्मान लखनऊ के राय उमानाथ वली प्रेक्षागृह में 17 नवम्बर 2007 को श्री प्रियंवद को डॉ० नामवर सिंह, वरिष्ठ साहित्यकार श्रीलाल शुक्ल और कथाकार राजेन्द्र यादव के हाथों प्रदान किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें 15 हजार रुपये, सम्मान पत्र और अंगवस्त्र प्रदान किये गये।

डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी स्मृति सम्मान

बलिया हिन्दी प्रचारिणी सभा द्वारा 14 सितम्बर 2007 को 'हिन्दी दिवस' के अवसर पर 'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जन्मशती समारोह' का आयोजन किया गया। 'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की इतिहास दृष्टि और उनका साहित्य' विषय पर **डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी** ने कहा कि बलिया क्रान्तिभूमि है। यहाँ का कण-कण मेरे लिए प्रणम्य है। यह मेरे गुरु आचार्य द्विवेदी की जन्मभूमि है। मेरे लिए यह तीर्थभूमि है। यह इतिहासभूमि है, सृजनभूमि है। बलिया हिन्दी प्रचारिणी सभा का यह मंच ऐतिहासिक है जहाँ भारतेन्दुजी, राहुलजी, आचार्य शुक्ल सहित न जाने कितने विद्वान आये और स्वयं गौरवान्वित हुए। मैं अभिभूत हूँ।

डॉ० प्रमोदकुमार सिंह ने कहा कि द्विवेदीजी ने शास्त्र को लोक से और लोक को पुरातत्व तथा पुरातत्व को वर्तमान की संकल्पना से जोड़ा है। इतिहास खड्ग से लिखा जाता है। यही इतिहास की राम कहानी है। 'नाखून बढ़ाना' पशुप्रवृत्ति का द्योतक है। उसे काटते रहना सभ्यता की निशानी है। यह संघर्ष जारी है और जारी रहेगा। काल की शक्ति टूटने पर इतिहास की शक्ति उसे जोड़ती है। द्विवेदीजी का साहित्य और इतिहास वास्तव में शिवसाधना का वास्तविक स्वरूप है। समीक्षक **डॉ० वेदप्रकाश** (रीडर, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय) ने कहा वे इतिहासकार नहीं थे किन्तु जीवन के जितने अन्तर्सबन्धात्मक सन्दर्भ हो सकते हैं, द्विवेदीजी के साहित्य में उपलब्ध हैं।

समारोह में डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी को 'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी स्मृतिसम्मान 2007', डॉ० प्रमोदकुमार सिंह को 'डॉ० भगवतशरण उपाध्याय स्मृतिसम्मान 2007', और विशिष्ट अतिथि डॉ० वेदप्रकाश को 'आचार्य परशुराम चतुर्वेदी स्मृति सम्मान 2007' से सम्मानित किया गया।

जगदीश भारद्वाज सम्मानित

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार ने हिन्दी प्रकाशन जगत की दीर्घकालीन सेवाओं के लिए वरिष्ठ प्रकाशक एवं सामयिक प्रकाशन के संस्थापक **श्री जगदीश भारद्वाज** को सम्मानित किया। 45 वर्षों से सक्रिय श्री भारद्वाज अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के महामंत्री और उपाध्यक्ष रह चुके हैं। वे 'हिन्दी प्रकाशक' मासिक के 4 वर्षों तक सम्पादक भी रहे हैं। इस दौरान उन्होंने लेखक-प्रकाशक सम्बन्धों को मधुर बनाने के लिए कई महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों का सफलतापूर्वक आयोजन किया।

प्रो० कौशलकिशोर मिश्र को 'भारत गौरव'

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के राजनीति विज्ञान विभाग के **प्रो० कौशलकिशोर मिश्र** को 'भारत गौरव' सम्मान दिया गया है। मध्यप्रदेश की ऋचा प्रकाशन ने प्रो० मिश्र को सम्मानस्वरूप अभिनन्दनपत्र व स्मृति-चिह्न प्रदान किया है।

प्रो० श्रीराम को अवार्ड

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रयुक्त गणित विभाग में **प्रो० श्रीराम** को 'राजीव गांधी शिरोमणि अवार्ड' से सम्मानित किया गया। आईआईएफएस द्वारा आयोजित संगोष्ठी में गत दिनों दिल्ली में पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त जीवीजी कृष्णमूर्ति ने यह सम्मान प्रदान किया।

बाबा साहब पुरंदरे को कालिदास सम्मान

देश के प्रतिष्ठित रंगकर्मी **बाबा साहब पुरंदरे** को कालिदास सम्मान से सम्मानित किया गया। मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने 22 नवम्बर 2007 को अखिल भारतीय कालिदास समारोह में पुरंदरे को यह पुरस्कार दिया। सम्मान के तहत लोकप्रिय नाटक 'जाणता राजा' सहित कई नाटकों का लेखन और निर्देशन करनेवाले पुरंदरे को प्रशस्तिपत्र एवं दो लाख रुपए की सम्मान-राशि प्रदान की गई।

जीवितराम सेतपाल सम्मानित

'प्रोत्साहन' के प्रधान सम्पादक **जीवितराम सेतपाल** को उनके विशिष्ट कृतित्व एवं साहित्यिक सेवाओं के लिए राष्ट्रीय राजभाषा पीठ (इलाहाबाद) ने सम्मानोपाधि 'भारती रत्न' से अलंकृत किया।

डॉ० रामअवतार पाण्डेय की काव्यकृति पुरस्कृत

जबलपुर की साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'कादम्बरी' द्वारा स्व० शकुंतला दुबे पुरस्कार हेतु **डॉ० रामअवतार पाण्डेय** की काव्यकृति 'सच और संवेदना' चुनी गई है। नई कविता के लिए दिया जाने वाला 2100 रुपये का यह पुरस्कार उनकी पुत्री शोभना पाण्डेय द्वारा स्थापित निधि द्वारा दिया जाता है। यह पुरस्कार उन्हें 27 नवम्बर को जबलपुर में प्रदान किया गया।

पद्मा सचदेव सम्मानित

20 अक्टूबर को जम्मू कश्मीर के शाही महल में राज परिवार द्वारा आयोजित समारोह में डोगरी की लब्धकीर्ति लेखिका **श्रीमती पद्मा सचदेव** को डोगरी साहित्य में उत्कृष्ट योगदान के लिए 'महाराज गुलाब सिंह मेमोरियल अवार्ड-2007' प्रदान किया गया।

डॉ० बुद्धिनाथ मिश्र को 'दिनकर' राष्ट्रीय सम्मान

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' की 100वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में 'दिनकर' के जनपद बेगूसराय के जिलाधिकारी श्री संजीव हंस ने सुप्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार **डॉ० बुद्धिनाथ मिर** को 'दिनकर' राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित किया। सम्मानस्वरूप उन्हें दस हजार एक की नकद राशि के अतिरिक्त प्रशस्ति पत्र, शॉल और प्रतीक चिह्न भी भेंट किया। सम्मानित साहित्यकार डॉ० बुद्धिनाथ मिश्र ने अपने उद्‌गार में कहा कि 'दिनकर' जीवित थे तब तक राष्ट्रकवि थे, मरणोपरांत वह विश्वकवि हो गये हैं।

मानव बगिया रचती है पुस्तक

काली अंधियारी रात में,
निष्कंप दीये की तरह,
गली की सीलनभरी कोठरी में,
चौकोर बड़े मुक्के की तरह,
उफनते-जलते दर्द के फफोले पर,
शीतल कोमल फाहे की तरह,
अभाव-कुभाव से जर्जर-धूसर शरीर पर,
स्निग्ध-सरस जल-फुहार की तरह,
राह रौशन करती/बयार लाती/बहलाती/
सहलाती/शकुन देती/
भिगोती/निर्मल बनाती है पुस्तक
और जहँ तहँ उगी कँटीली-बनैली झाड़ियाँ
कतर-छतर, सजा सँवार, सुन्दर सभ्य,
मानव बगिया रचती है पुस्तक।

—डॉ० कुसुम राय, बर्द्धवान

अत्र-तत्र-सर्वत्र

दिनकर-जन्मशताब्दी-समारोह

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' जन्मशताब्दी समारोह का विधिवत् शुभारम्भ नई दिल्ली के मावलंकर सभागार में 23 सितम्बर 2007 को सम्पन्न हुआ। समारोह में भारत सरकार के स्वराष्ट्र मंत्री शिवराज पाटिल, विद्युतमंत्री श्री सुशीलकुमार शिंदे, पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्री श्री मुरलीमनोहर जोशी, सांसद वशिष्ठनारायण सिंह, पूर्व सांसद डॉ० रत्नाकर पाण्डेय, कवि बलवीर सिंह 'करुण' और न्यास के आयोजक अध्यक्ष श्री नीरज कुमार सहित अनेकानेक गणमान्य अधिकारी, लेखक और कवि उपस्थित थे।

यह समारोह नई दिल्ली अथवा बड़े महानगरों तक सीमित न रहकर गाँव-गाँव शहर-शहर में आयोजित हो, यह प्रयास किया जाना चाहिए। दिनकरजी जनता के कवि थे और उनकी वाणी जनमन में ओज, पौरुष और राष्ट्रीय चेतना का सहज संचार करने वाली वाणी है। आज जब वैश्वीकरण की चकाचौंध में हमारी अस्मिता की पहचान पर संकट पैदा हो रहा है, दिनकरजी के साहित्य के प्रचार-प्रसार की बड़ी आवश्यकता है। जन्मशताब्दी वर्ष के बहाने यह जरूरी काम अनायास सध जायगा, ऐसा विश्वास है।

आचार्य पं० सीताराम चतुर्वेदी जन्मशताब्दी समारोह

27 जनवरी 1907 को काशी में जन्मे आचार्य पं० सीताराम चतुर्वेदी अपने कर्मनिष्ठ जीवन के 98 वसन्त देखकर 17 फरवरी 2005 को गोलोकवासी हुए। 99वें वर्ष में प्रवेश के अवसर पर उनका जन्मदिवस समारोह काशी में वैदिक विधि-विधान के साथ उनके छोटी पियरी स्थित 'वेदपाठी भवन' में इस कामना से मनाया गया था कि एक ही वर्ष बाद उनकी उपस्थिति में उनका शताब्दी-वर्ष मनायेंगे। किन्तु, विधाता को यह स्वीकार नहीं था।

आचार्यजी जैसे सुकृती अपनी यशोकाया से सदा-सर्वदा जीवित रहते हैं। 'भारतीय वाङ्मय' की सम्भवत: कोई विधा ऐसी नहीं है जिसमें आचार्य चतुर्वेदी का अधिकार न रहा हो तथा जिसमें उनका कृतित्व स्मरणीय न हो। नाटक, नाट्यशास्त्र, काव्य, काव्यशास्त्र, समीक्षा, समीक्षाशास्त्र, भाषा-विज्ञान, शिक्षाशास्त्र, मनोविज्ञान, कथासाहित्य, जीवन चरित, इतिहास, दर्शन, धर्म, पुराण और तंत्र-मंत्र तमाम विधाओं में उनकी 250 से अधिक पुस्तकें उनके अद्वितीय पाण्डित्य का परिचय देती हैं। कालिदास ग्रन्थावली का सम्पादन और प्रकाशन, रामचरितमानस और सूरसागर की व्याख्या, वाल्मीकि रामायण का हिन्दी अनुवाद और इस तरह के अनेक ऐसे कार्य हैं जिनकी पूर्णता कठोर साधना, तपश्चर्या तथा अध्यवसाय द्वारा ही सम्भव है। संगीत (वाद्य, कंठ और नृत्य), अभिनय तथा भाषण-कला में पारंगत उनके समतुल्य आचार्य कम ही दिखलाई पड़ते हैं।

27 जनवरी 2007 को वाराणसी से उनके जन्मशताब्दी समारोह का शुभारम्भ हुआ। प्रयाग, मेरठ, कलकत्ता और अनेक स्थानों पर इस शृंखला में कई आयोजन सम्पन्न हुए। इसी क्रम में 2 नवम्बर 2007 को वाराणसी की संस्था भारतीय विद्या अध्ययन केन्द्र द्वारा स्थानीय अग्रसेन कन्या इण्टर कालेज के सभागार में सारस्वत अनुष्ठान सम्पन्न हुआ जिसकी अध्यक्षता महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ के कुलपति प्रो० एस०एस० कुशवाहा ने की। इस अवसर पर सर्वश्री धर्मशील चतुर्वेदी, गीतकार श्रीकृष्ण तिवारी, प्रो० गिरीशचन्द्र चौधरी, डॉ० छबिनाथ पाण्डेय, डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र, समाजसेवी संदीप अग्रवाल, डॉ० जयशीला, डॉ० कल्पलता पाण्डेय, डॉ० जगदीशनारायण दुबे और डॉ० केशरीनारायण तिवारी प्रभृति अनेक वक्ताओं ने इस बात पर बल दिया कि आचार्य चतुर्वेदी के विराट व्यक्तित्व एवं कृतित्व की प्रेरणा को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित एवं संरक्षित करने हेतु ठोस प्रयास की आवश्यकता है। कार्यक्रम का समापन बाल विश्वविद्यालय तथा अग्रसेन कन्या इण्टर कालेज की छात्राओं द्वारा प्रस्तुत मनोहारी सांस्कृतिक कार्यक्रमों से हुआ।

त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी 'साहित्य-अमृत' के सम्पादक हुए

कर्नाटक के राज्यपाल तथा उसके पूर्व भारत सरकार के गृहसचिव, महालेखा-नियंत्रक के रूप में अपनी प्रशासनिक क्षमता, सूझ-बूझ और अपूर्व प्रतिभा के लिए विख्यात माननीय **श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी** का साहित्यानुराग, विशाल अध्ययन, हिन्दी-सेवा और पुस्तक-प्रेम सर्वविदित रहा है। राज्यपाल के गरिमामंडित पद पर रहते हुए भी वे जब वाराणसी आते तब समय निकालकर 'विश्वविद्यालय प्रकाशन' अवश्य पधारते और अपनी रुचि की पुस्तकें खरीदते। हिन्दी भाषा और साहित्य से सम्बन्धित अनेकानेक राष्ट्रीय संस्थाओं से वे सक्रिय रूप में सम्बद्ध रहे हैं। इन मंचों से वे निरन्तर भारत-भारती के सर्वांगीण विकास एवं संवर्धन की दिशा में अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त करते रहे हैं।

उनकी विद्वत्ता, प्रतिभा और रचनात्मकता का यथेष्ट सम्मान करते हुए कई विश्वविद्यालयों ने उन्हें डाक्टरेट की मानद उपाधि प्रदान की तथा भारत सरकार ने सन् 1990 में पद्मविभूषण अलंकरण से सम्मानित किया। राज्यसभा के सदस्य के रूप में भी उनकी सेवाएँ उल्लेखनीय रही हैं।

ऐसे सक्षम और तेजस्वी व्यक्ति के सम्पादकत्व में 'साहित्य अमृत' सफलता की नयी ऊँचाइयों को स्पर्श करेगा, ऐसा विश्वास है। 'भारतीय वाङ्मय' के पाठकों की ओर से हर्दिक बधाई।

नोबेल पुरस्कार 2007

राजेन्द्र पचौरी ने देश का मान बढ़ाया

स्वीडनस्थित स्वीडिश एकेडमी ने अक्टूबर के दूसरे सप्ताह में 2007 के विश्वविख्यात नोबेल पुरस्कारों की घोषणा की। विश्व का यह सबसे प्रतिष्ठित पुरस्कार इस वर्ष 12 लोगों को दिया गया। चिकित्सा एवं अर्थशास्त्र में तीन-तीन तथा भौतिकी और शांति पुरस्कार में दो-दो व्यक्तियों को नोबेल के गौरव का अधिकारी माना गया। भारत का गौरव बढ़ाया राजेन्द्र पचौरी ने जो जलवायु परिवर्तन पर अध्ययन करने वाली संयुक्त राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था 'इंटरगवर्नमेंटल पैनल आन क्लाइमेटिक चेंज' (आई०पी०सी०सी०) के अध्यक्ष के रूप में सन् 2002 से कार्यरत हैं। इस संस्था के अन्तर्गत 300 मौसम विज्ञानी ग्लोबल वार्मिंग तथा उसके प्रभाव के अध्ययन की दिशा में अथक परिश्रम कर रहे हैं। राजेन्द्र पचौरी को यह शान्ति पुरस्कार अमेरिका के पूर्व उपराष्ट्रपति अलगोर के साथ संयुक्त रूप में दिया गया। अलगोर ने भी जलवायु-परिवर्तन तथा उसके संभावित खतरों के प्रति विश्व को जागरूक बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

राजेन्द्र पचौरी यह पुरस्कार जीतनेवाले आठवें भारतीय हैं। इनके पूर्व महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर को साहित्य के लिए 1913 में, सर सी०वी० रमन को भौतिकी के लिए 1930 में, डॉ० हरगोविंद खुराना को मेडिसिन के लिए सन् 1968 में, मदर टेरेसा को शांति के लिए 1979 में, डॉ० एस० चन्द्रशेखर को भौतिकी के लिए 1983 में, डॉ० अमर्त्यसेन को अर्थशास्त्र के लिए 1998 में और श्री वी०एस० नायपॉल को साहित्य के लिए 2001 में सम्मानित किया जा चुका है। महान भारतीय प्रतिभाओं की सूची में स्थान प्राप्त करने के लिए श्री पचौरी का 'भारतीय वाङ्मय' के पाठकों की ओर से हार्दिक अभिनन्दन।

2007 के नोबेल पुरस्कार विजेता

स्वीडेन के महान वैज्ञानिक अल्फ्रेड बर्नहार्ड नोबेल की अन्तिम इच्छा के अनुसार उनकी सम्पत्ति से नोबेल पुरस्कारों के चयन हेतु फाउण्डेशन की स्थापना उनकी मृत्यु (1895) से एक वर्ष पूर्व हो गई थी किन्तु पुरस्कारों का प्रारम्भ 1901 से हुआ। तब से ये पुरस्कार प्रतिवर्ष संस्थापक की पुण्यतिथि (10 दिसम्बर) पर दिये जाते हैं। पहले केवल भौतिकी, रसायन, चिकित्सा, साहित्य और शान्ति इन पाँच श्रेणियों में नोबेल पुरस्कार दिये जाते थे, किन्तु 1969 से इसमें अर्थशास्त्र को भी सम्मिलित कर लिया गया।

इस वर्ष (2007) के नोबेल पुरस्कार विजेताओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. **रसायन**—गेरहार्ड एर्टल (जर्मनी) को ठोस सतहों पर रासायनिक क्रियाओं के अध्ययन और ओजोन परत के क्षरण के कारणों पर शोध हेतु।
2. **भौतिकी**—अल्बर्ट फर्ट (फ्रांस) तथा पीटर गूनबर्ग (जर्मनी) को नैनोटेक्नालॉजी के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण अनुसंधान हेतु।
3. **चिकित्सा**—मारिओ आर कैपेची (अमेरिका) सर मार्टिल जे० इवान्स (यू०के०) तथा ओलिवर स्मिथीज़ (अमेरिका) को स्तंभ कोशिका के क्षेत्र में नवीन अनुसंधान हेतु।
4. **साहित्य**—डॉरिस लैसिंग (यूनाइटेड किंगडम) को पिछले साठ वर्षों के रचनात्मक साहित्य-लेखन के लिए।
5. **शान्ति**—राजेन्द्र पचौरी (भारत) तथा अलबर्ट अर्नाल्ड (अल) गोर जू (अमेरिका) को जलवायु-परिवर्तन की दिशा में महत्त्वपूर्ण काम के लिए।
6. **अर्थशास्त्र**—एरिक एस० मैस्किन (अमेरिका), लियोनिड हर्बिज़ (अमेरिका) और रोजर बी० मेयर्सन (अमेरिका) को मेकेनिज़्म डिजाइन थ्योरी के अनुसंधान हेतु।

वाराणसी में राष्ट्रीय पुस्तक मेला

नेशनल बुक ट्रस्ट (एन०बी०टी०) द्वारा आयोजित 31वाँ राष्ट्रीय पुस्तक मेला इस वर्ष वाराणसी के बेनियाबाग में 30 अक्टूबर से 6 नवम्बर 2007 तक सम्पन्न हुआ। इस मेले में आयोजक संस्था तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद के अलावा भारतीय ज्ञानपीठ, राजकमल प्रकाशन, राधाकृष्ण प्रकाशन, संस्कृति संस्थान, साहित्य अकादमी, ललित कला अकादमी, विश्व बुक्स, दिल्ली बुक कम्पनी, साहित्य उपक्रम, रचनाकार प्रकाशन, गुड वर्ल्ड बुक्स, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आई सी एफ ए आई पब्लिकेशन्स और ए०बी०सी० एजूकेशन ट्रेडर्स आदि दो दर्जन से अधिक प्रकाशकों ने भाग लिया। 'राष्ट्रीय पुस्तक मेला' नाम अधिक सार्थक होता यदि इसमें प्रकाशकों की भागीदारी और अधिक व्यापक होती तथा संविधान में स्वीकृत सभी भाषाओं के प्रतिनिधि प्रकाशक सम्मिलित होते। वाराणसी जैसे नगर में गुजराती, मराठी, बंगाली, सिंधी, पंजाबी और दक्षिण भारतीय भाषाओं के जानकार पाठक बड़ी संख्या में रहते हैं। मेले में हिन्दी, संस्कृत, उर्दू और अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं की पुस्तकों का अभाव खलने वाली बात थी। इसके साथ ही वाराणसी के स्थानीय प्रकाशकों की मेले में अनुपस्थिति भी लोगों को खली। इस ओर आयोजकों का ध्यान अभीष्ट है।

जो भी हो, आयोजन इस दृष्टि से सफल रहा कि इस मेले में वाराणसी तथा आस-पास के पुस्तक-प्रेमी न केवल उपस्थित हुए बल्कि उन्होंने उल्लेखनीय खरीददारी भी की। अब तक यही कहा जाता था कि विश्व की सांस्कृतिक राजधानी में लोग पुस्तकें कम खरीदते हैं। मेले में नयी पीढ़ी की भागीदारी भी उल्लेखनीय रही।

तुम्हें ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए

अगर देखना नहीं चाहते
मत देखो
अगर पढ़ना नहीं चाहते
मत पढ़ो

मगर तस्वीरों को फाड़ो मत
मत जलाओ किताबों को

अगर नफ़रतों के दर्शन
करा रही हैं तस्वीरें
अगर घृणा का पाठ
पढ़ा रही हैं किताबें
तो भी
तुम्हें ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए
कि प्रश्न उठें
तुम्हारी कार्रवाइयों पर

समय की सीलन किसलिए है
और दीमकें ?
सोचो !

किसलिए है
प्यार की कूंची
और कल्मष-मारक कलम ?

—केशवशरण, सिकरौल, वाराणसी

पुस्तक मेले में प्रदर्शन
'अरे इन दोऊ राह न पाई।'

वाराणसी में आयोजित 31वाँ राष्ट्रीय पुस्तक मेला अपनी भव्यता और सफलता के लिए उल्लेखनीय रहा किन्तु शनिवार 3 नवम्बर 2007 की शाम यहाँ तथा बाद के दो-तीन दिनों में प्रतिक्रियास्वरूप शहर में जो कुछ हुआ, वह न तो शोभनीय था, न उचित।

हुआ यह कि उस दिन सुबह के एक दैनिक अखबार में पुस्तक मेले में बिक रही एक पुस्तक 'कितने खरे हमारे आदर्श' के कुछ अंशों को रेखांकित करते हुए 'श्री राम की मर्यादा पर सवाल, राधा-कृष्ण-सम्बन्ध आपत्तिजनक' शीर्षक एक टिप्पणी छप गई। इससे उत्तेजित होकर कथित रूप से शिवसेना, भाजपा, रामसेतु रक्षामंच और धर्मसंघ मण्डल के कतिपय कार्यकर्ता संध्या 5 बजे के करीब मेले में पहुँच गए। नारेबाजी के साथ ही प्रतीकात्मक रूप में हिन्दू देवी-देवताओं का अपमान करनेवाली पुस्तक का अग्नि संस्कार वहाँ किया गया। तोड़-फोड़ का विरोध करनेवाले एकाध स्टाल संचालकों के साथ अभद्र व्यवहार भी किया गया।

राम और कृष्ण भारतीय अस्मिता एवं आस्था के प्रतीक हैं। इन्हें लेकर या बुद्ध, महावीर, ईसा मसीह, मुहम्मद साहब या इस प्रकार के किसी आस्था केन्द्र को लेकर पक्ष-विपक्ष की राजनीति नहीं की जानी चाहिए। धार्मिक दृष्टि से जो जिसका उपास्य है, उसकी उपासना वह पूरी निष्ठा के साथ स्वतन्त्रतापूर्वक करे, यही धार्मिक स्वतन्त्रता का अर्थ है, किन्तु धर्म यह भी सिखाता है कि कोई किसी दूसरी धार्मिक आस्था का अनादर न करे। ऐसी स्थिति में किसी धार्मिक आस्था के विरुद्ध विषबमन करनेवाली सामग्री जानबूझकर अपमान करने की नीयत से किसी रूप में छापी जाती है, तो यह निंदनीय कृत्य ही नहीं बल्कि सामाजिक समरसता और सद्भाव को बाधित करने वाला कानूनन दण्डनीय अपराध भी है।

इस दिशा में सामाजिक सजगता वांछित है तथा इसके विरोध में आवाज भी उठानी चाहिए, किन्तु जिस तरह से विरोध-प्रदर्शन किया गया, उसे उचित नहीं ठहराया जा सकता। यह प्रसंग न घटित होता तो कितना अच्छा होता। घटित हुआ तो अनायास संत कबीर की वाणी याद आई—

'अरे इन दोऊ राह न पाई।'

पुस्तक जलाने का प्रतिरोध

4 नवम्बर 2007 को पुस्तक जलाने को लेकर मेला परिसर में काशी नगर के बुद्धिजीवियों द्वारा प्रतिरोध में एक गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें बोलते हुए प्रसिद्ध कथाकार **काशीनाथ सिंह** ने कहा कि मुट्ठीभर लोग नहीं जानते कि काशी की सांस्कृतिक जड़ें कितनी गहरी हैं। विचारों को जलाने से वे तेजी से पनपते हैं। आक्रोश विचारों को नष्ट करता है। उन्होंने इस अवसर पर प्रशासन की उदासीनता की भी आलोचना की।

युवा कवि **श्रीप्रकाश शुक्ल** ने कहा कि पुस्तकें संत समागम का केन्द्र होती हैं। उनसे न केवल भविष्य उज्ज्वल होता है बल्कि अतीत की तमाम जड़ताएँ भी नष्ट होती हैं। जड़ लोग नहीं जानते कि पुस्तक जलाकर वे कितने भविष्य को नष्ट कर रहे हैं। **डॉ० आनंद तिवारी** ने कहा कि कलम की लड़ाई मल्लयुद्ध से नहीं होनी चाहिए। लोकतांत्रिक परम्परा में हिंसक विरोध शर्मनाक है। **डॉ० गया सिंह** ने कहा कि प्रशासन को इन घटनाओं से निपटने के लिए सार्थक पहल करनी चाहिए। **डॉ० आनंद दीपायन** ने कहा कि पुस्तकों को सट्टेबाजी से बचाना चाहिए। साहित्यकार **रामाज्ञा राय** ने कहा कि बाजार, बजरंग व सत्ता की संस्कृति के बीच फँसी जनसंस्कृति को आज के बुद्धिजीवी निकालने की पहल करें। **प्रो० चौथीराम यादव** ने इस तरह के हमले को संस्कृति पर हमला बताया। संचालन प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष **संजय श्रीवास्तव** ने किया। सभा में शिवकुमार पराग, गोरख पाण्डेय, जवाहरलाल कौल, दीनबंधु तिवारी, अशोक पाठक, डॉ० महेन्द्र सिंह ने भी विचार रखे।

वाराणसी में विश्व भोजपुरी सम्मेलन

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के स्वतन्त्रता-भवन में त्रिदिवसीय विश्व भोजपुरी सम्मेलन 4 अक्टूबर से 6 अक्टूबर 2007 तक हुआ। सम्मेलन का शुभारम्भ करते हुए भारत में मारिशस के उच्चायुक्त **श्री मुक्तेश्वर चुन्नी** ने अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में भोजपुरी के विकास पर बल दिया। उन्होंने पूरे विश्व में यत्र-तत्र बिखरी हुई मणियों को एकसूत्र में पिरोने की आवश्यकता बतलाई।

विशिष्ट वक्ता के रूप में विचार व्यक्त करते हुए माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय के कुलपति **श्री अच्युतानंद मिश्र** ने कहा कि हिन्दी के विकास के साथ भोजपुरी का विकास जुड़ा हुआ है।

दूसरे विशिष्ट वक्ता उ०प्र० के पूर्वमंत्री **दुर्गाप्रसाद मिश्र** ने कहा कि भोजपुरी एक बोली नहीं बल्कि जमाना है और जमाना हुकूमत बदलने की ताकत रखता है। आपके अनुसार स्वतन्त्रता आन्दोलन में भोजपुरीभाषियों ने अगुवाई की और उनके जागरूक होने पर ही हिन्दी की समुचित प्रतिष्ठा होगी जिसके साथ भोजपुरी का विकास भी जुड़ा हुआ है।

समारम्भ समारोह के अध्यक्ष काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति **प्रो० पंजाब सिंह** ने कहा कि भोजपुरी की उर्वरा शक्ति सभी भाषाओं को बल देती है। आपने विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में भोजपुरी के विशेष अध्ययन को सम्मलित करने का आश्वासन दिया। आगत अतिथियों का परिचय **प्रो० राजकुमार** ने कराया। स्वागत **डॉ० अरुणेश नीरन**, धन्यवाद **सतीश त्रिपाठी** और संचालन **डॉ० नीरजा माधव** ने किया।

सम्मेलन का दूसरा दिन भोजपुरी से जुड़े मुद्दों पर बतकही का था। इसके अन्तर्गत 'भोजपुरी पत्रकारिता : तब और अब' विषय पर परिचर्चा काफी महत्त्वपूर्ण रही। इस सत्र की अध्यक्षता गोरखपुर वि०वि० के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष **प्रो० रामदेव शुक्ल** ने की। मुख्य अतिथि एवं वक्ता थे **डॉ० अच्युतानंद मिश्र**।

तीसरे दिन समापन समारोह के मुख्य अतिथि जवाहरलाल नेहरू वि०वि० के हिन्दी विभाग के पूर्व आचार्य **डॉ० मैनेजर पाण्डेय** का व्याख्यान काफी चर्चित रहा। उन्होंने कहा कि सम्मेलन मे हर कोई राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज की बात कर रहा है और कोई स्थानीय रहना ही नहीं चाहता। ऐसी दशा में स्थानीय भाषा भोजपुरी की वस्तुस्थिति कैसे समझी जा सकती है? आपके अनुसार वैश्वीकरण की लड़ाई का जवाब स्थानीय भाषा के द्वारा ही दिया जा सकता है।

विशिष्ट अतिथि कुलपति **प्रो० पंजाब सिंह** ने मुख्य वक्ता से सहमति जताते हुए कहा कि मनोरंजन की भाषा के स्तर से ऊपर उठकर भोजपुरी के विकास का गम्भीर प्रयास अपेक्षित है।

समापन समारोह के अध्यक्ष थे महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ के कुलपति **प्रो० एस०एस० कुशवाहा** जिन्हें इस कारण बोलने ही नहीं दिया गया कि वे भोजपुरी के विकास की बात राजभाषा हिन्दी के माध्यम से कह रहे थे। दर्शक-दीर्घा के साथ-साथ मंचस्थ लोगों की टोकाटोकी से खिन्न होकर उन्होंने आयोजन का बहिष्कार कर देना उचित समझा।

समारोह के अन्तर्गत कई सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुए जिनमें 'मेघदूत की पूर्वांचल यात्रा' तथा 'पंडवानी' के कार्यक्रम काफी सराहे गये।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में बाबू जगजीवन राम पीठ की स्थापना

30 अक्टूबर को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सामाजिक विज्ञान संकाय के अन्तर्गत 'बाबू जगजीवन राम पीठ' का उद्घाटन भारत सरकार की सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्री **माननीया मीरा कुमार** ने किया। बाबूजी की सुपुत्री होने के नाते इस अवसर पर सहज ही भावुकता के वशीभूत होकर उन्होंने अपने पिता तथा देश के इस महान राष्ट्रनेता के जीवन के मार्मिक संस्मरणों के साथ-साथ महामना मालवीय तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से उनके रागात्मक जुड़ाव की विशेष चर्चा की। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि जातिविहीन, वर्गविहीन समाज की स्थापना का जो महास्वप्न उनके महान पिता देखा करते थे, उनके नाम पर स्थापित पीठ उस दिशा में सार्थक पहल करेगा।

आयोजन के अध्यक्ष कुलपति **प्रो० पंजाब सिंह** ने कहा कि सामाजिक रुग्णता को दूर करना ही शिक्षा का प्रमुख प्रयोजन है। संकाय-प्रमुख **प्रो० जी०एन० पाण्डेय** ने पीठ के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए अतिथियों का स्वागत किया। संचालन प्रो० अवधेश प्रधान ने तथा धन्यवाद प्रकाश प्रो० शुभा राव ने किया।

मैसूर में हिन्दी दिवस तथा हिन्दी-संघ का समारम्भ समारोह

हिन्दी के तीन रूप माने जाते हैं। वे हैं— राष्ट्रभाषा, राजभाषा और सम्पर्क भाषा। इन तीनों रूपों का बड़ा महत्व है। हिन्दी भाषा जोड़नेवाली सुई है, तोड़नेवाला हथौड़ा नहीं। वह भारतीय संस्कृति को एक छत्रछाया में लाती है। राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की नितान्त आवश्यकता है। अन्य भाषाओं की रचनाओं का हिन्दी में, हिन्दी की रचनाओं का अन्य भाषाओं में अनुवाद करना आज पहले किसी भी समय की तुलना में अत्यन्त आवश्यक है। आज हमें शपथ लेनी होगी कि हम हिन्दी सीखेंगे, अच्छी हिन्दी सीखेंगे। मैसूर के जे०एस०एस०पि०यु० महिला कालेज में हिन्दी दिवस का आचरण तथा हिन्दी संघ का समारम्भ करते हुए मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के भूतपूर्व मुख्यस्थ **डॉ० तिप्पेस्वामीजी** ने उपर्युक्त बातें कहीं।

बायें से दाहिने बी० टी० शशिकला देवी, डॉ० तिप्पे स्वामी और प्रो० मल्लिकार्जुन शेट्टी

अध्यक्ष के स्थान से वक्तव्य देते हुए जे०एस०एस० पदवी महिला कालेज (स्वायत्त) के प्राचार्य **प्रो० मल्लिकार्जुन शेट्टीजी** ने कहा कि कर्नाटक से बाहर जाने पर मालूम होता है कि हिन्दी का महत्त्व क्या है? आज हिन्दी सीखने की आवश्यकता पहले किसी भी समय से अधिक बढ़ गयी है। सदा हिन्दी में बातें करते रहने से, हिन्दी की पत्रिकाओं को रोज़ पढ़ते रहने से, टी०वी० के समाचारों को रोज़ सुनते रहने से, हम हिन्दी आसानी से सीख सकते हैं। हिन्दी को यथोचित स्थान पहले से ही दिया गया होता तो निस्संशय कह सकते हैं कि भारत ने वैज्ञानिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, जागतिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में आज जो साधना की है, उससे दस गुना साधना वह कर चुका होता। चीन या जापान के उदाहरण से हमें स्पष्ट होता है कि वहाँ भाषा की कोई उलझन नहीं रहने के कारण साधना में वे हमसे बहुत आगे हैं। उनकी सफलता का प्रमुख कारण यह है कि वे सर्वसम्मति से एक ही भाषा का इस्तेमाल करते हैं।

गोदान का अभिनय

प्रेमचंद की लोकप्रियता आज भी सर्वोपरि है। अपने उपन्यासों तथा कहानियों में मानवीय चरित्र का जो चित्र उन्होंने प्रस्तुत किया है, उसका आकर्षण तमाम बदलाव के बाद भी कम नहीं हुआ है। 4 नवम्बर 2007 को स्थानीय नागरी नाटक मण्डली के प्रेक्षागृह में नई दिल्ली की साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'स्टेप्स फार चेंज' द्वारा प्रस्तुत 'गोदान' के नाट्याभिनय से यह बात प्रमाणित हुई। यह कार्यक्रम वाराणसी की सांस्कृतिक-साहित्यिक संस्था 'सेतु' के सौजन्य से आयोजित हुआ। इसके संयोजक सलीम राजा, अध्यक्ष डॉ० हरिओम सिंह और स्वागताध्यक्ष डॉ० रामअवतार पाण्डेय ने नाटक में भाग लेनेवाले रंगकर्मियों का स्वागत किया। नाट्य निर्देशक **रीतेश कुमार** ने नाट्याभिनय के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन की दिशा में अग्रसर अपनी संस्था के इतिवृत्त का संक्षिप्त परिचय दिया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि सुप्रसिद्ध रंगकर्मी **श्री नीलकमल चटर्जी** थे।

हिन्दी विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम अब यूरोपीय देशों में भी

महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा द्वारा प्रस्तावित आदर्श पाठ्यक्रमों के आधार पर यूरोपीय देशों के विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम चलाये जाने का महत्त्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक निर्णय हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी कार्यशाला में लिया गया। यह जानकारी *वर्धा स्थित अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय* के **कुलपति प्रो० जी० गोपीनाथन** ने दी।

यह हिन्दी कार्यशाला हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट में ओत्वोश लोरांद विश्वविद्यालय एवं भारतीय दूतावास के सहयोग से 24 से 27 अक्टूबर 2007 तक आयोजित की गई थी। इस कार्यशाला में भारत सहित पोलैण्ड, चैक, यूक्रेन, रोमानिया, आस्ट्रिया, बल्गारिया, सेरडिया एवं हंगरी के लगभग 25 विद्वानों एवं विशेषज्ञों ने भाग लिया। कार्यशाला के समारम्भ-समारोह का बीज वक्तव्य प्रो० जी० गोपीनाथन ने दिया।

कार्यशाला का विधिवत समारम्भ ऐलतै विश्वविद्यालय के कुलपति फेरैंत्स हुदैत्स ने किया। समारोह में भारतीय राजदूत रंजीत राय और विदेश मंत्रालय के संयुक्त सचिव वी०पी० हरन विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

प्रो० गोपीनाथन ने कहा कि इस समय यूरोप के कई छोटे-छोटे देश जैसे एस्तोनिया, लाटविया आदि में भी हिन्दी की तीव्रतर माँग है और इसके लिए इन देशों में हिन्दी अध्यापकों को प्रतिनियुक्ति पर भेजने का अनुरोध भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद से किया गया है। महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा एवं विदेश मंत्रालय के सहयोग से हिन्दी भाषा प्रौद्योगिकी, हिन्दी अनुवाद प्रौद्योगिकी एवं हिन्दी तुलनात्मक साहित्य जैसे प्रस्तावित विषयों पर इन देशों में नवीकरण पाठ्यक्रम आयोजित करेगा। उन्होंने यह भी कहा कि हिन्दी के अन्तरराष्ट्रीय पाठ्यक्रमों के अन्तर्गत विदेशी विद्वानों के सहयोग से मल्टीमीडिया सामग्री के निर्माण के लिए महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, एनसीईआरटी एवं सी-डैक का संयुक्त रूप से एक संघ बनेगा जिसका संयोजन विदेश मंत्रालय करेगा। केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय और राजभाषा विभाग से भी इसके लिए मदद ली जायेगी। हिन्दी के द्विभाषी एवं बहुभाषी पाठ्यक्रमों को तैयार करने में भी ये संस्थाएँ विदेशी विश्वविद्यालयों के साथ सहयोग करेंगी। प्रेमचंद एवं हिन्दी कहानियों का पाठकवर्ग तैयार किया जाएगा। इस कार्यशाला में यह भी निर्णय हुआ कि यूरोपीय देशों के छात्रों को भारत में हिन्दी भाषा और संस्कृति के अध्ययन के लिए विशेष छात्रवृत्तियाँ भी प्रदान की जाएँगी। इसके अलावा यूरोप में बसे भारतीय प्रतिष्ठानों में भारतीय भाषा जानने वाले यूरोपीय आवेदकों को नियुक्तियों में वरीयता दिये जाने की संस्तुति की गई। विश्वविद्यालय की उपलब्धि में यह कार्यशाला महत्त्वपूर्ण रही है, यह बताते हुए कुलपति प्रो० गोपीनाथन ने कहा कि बुडापेस्ट कार्यशाला में मध्य एवं पूर्वी यूरोप के हिन्दी पाठ्यक्रमों में बोलेग्ने-समझौते के अनुसार इसे पाँच वर्ष का बनाने, उसमें एकरूपता लाने और नवीकरण करने के विषयों पर आलेख प्रस्तुत किए गए और इस पर गहन परिचर्चा की गई। इसी कार्यशाला में विदेश मंत्रालय के सहयोग से हर दो वर्ष में इस प्रकार की हिन्दी कार्यशाला एवं अन्तरराष्ट्रीय कार्यशाला के आयोजन आयोजित किये जाने की भी संस्तुति की गई।

नोएडा में पुस्तक मेला

एसोसिएशन ऑफ इण्डियन पब्लिशर्स एण्ड बुकसेलर्स के तत्वावधान में दूसरा पुस्तक मेला 8 से 16 दिसम्बर तक नोएडा में होने जा रहा है।

महीप सिंह रचनावली का लोकार्पण

13 नवम्बर को वरिष्ठ साहित्यकार श्री महीप सिंह की दस खण्डों में प्रकाशित रचनावली का लोकार्पण उपराष्ट्रपति श्री मो० हामिद अंसारी ने उपराष्ट्रपति भवन स्थित सभागार में किया। इसका प्रकाशन नमन प्रकाशन तथा सम्पादन अनिल कुमार ने किया है। उपराष्ट्रपति ने रचनावली का लोकार्पण करते हुए कहा कि लेखक तस्वीर के पीछे की तस्वीर को सिर्फ देखता ही नहीं, बल्कि उसे शब्दों में पिरोता है। वह अपनी भावनाओं और अनुभवों को साझा कर अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है। 50 वर्ष से निरन्तर लिख रहे महीप सिंह ने अपनी रचनाओं में इस अभिव्यक्ति को बहुत अच्छे ढंग से उकेरा है। वरिष्ठ लेखक-समालोचक डॉ० रामदरश मिश्र ने इस अवसर पर महीप सिंह के लेखकीय अवदान का जायजा लेते हुए कहा कि उनकी कहानियाँ मानवीय संवेदना से पूर्ण होती हैं इसलिए साहित्य में उनका स्थान विशिष्ट है।

भारतीय वाङ्मय के संस्थापक सम्पादक गोलोकवासी पुरुषोत्तमदास मोदी के 79वें जन्मदिन पर उनके अभिन्न मित्र प्रो० रामचन्द्र तिवारी के उद्‌गार

रामचन्द्र पोथी लिखैं, पुरुषोत्तम दैं छाप।
साथ निभ्यो दोऊन को या विधि आपै-आप॥

पुरुषोत्तम उन्यासी भये, रामचन्द्र असि तीन।
एक शब्द में रमि रहा एक अर्थ में लीन॥

शुभकामनाओं के साथ,
—रामचन्द्र तिवारी

पाठकों के पत्र

'भारतीय वाङ्मय' का अंक 9 मिला। सदा की तरह आपने प्रेमचंदजी के सम्बन्ध में हमारे दृष्टिकोण को लेकर कुछ खरी-खरी बातें कही हैं। कुछ अधिक ही उत्तेजित हो उठे हैं आप। प्रेमचंद स्मृति संस्थान के सम्बन्ध में भी आपने ठीक ही कहा है। जो भी हो, अंतत: मैं आपसे सहमत हूँ।

इस अंक में और भी बहुत कुछ है पढ़ने और सोचने के लिए। साहित्य-संस्कृति के सम्बन्ध में आप कुछ न कुछ तो लिखते ही रहते हैं। इसका असर भी होता है। आपका चित्र भी देखा। मेरे सामने आप तो अभी जवान हैं। मैं तो अब थक गया हूँ भाई। खैर, जो भी हो, अंक संग्रहणीय है।

—विष्णु प्रभाकर, दिल्ली

'भारतीय वाङ्मय' को मैं 'गागर में सागर' कहता रहा हूँ। महत्त्वपूर्ण साहित्यिक सूचनाओं के साथ-साथ विमर्श के लिए कुछ विचारणीय लेखों का समावेश करने के कारण पत्रिका और अधिक उपयोगी हो जाती है। आपका सम्पादकीय खरी-खरी बातें करता है। इसे पढ़कर इतिहास की जानकारी मिलती है और वर्तमान विसंगतियों पर विचार का अवसर भी। पुस्तक-विषयक कविताओं का प्रकाशन करके आपने अच्छा सिलसिला शुरू किया है। छोटी-छोटी रचनाओं के माध्यम से पुस्तक-संस्कृति को प्रोत्साहन मिलता है। भविष्य में इन कविताओं का संग्रह करके पुस्तक भी छापी जा सकती है। **—गिरीश पंकज,** रायपुर

सितम्बर 2007 का 'भारतीय वाङ्मय' मिला। 'प्रेमचंद स्मृति संस्थान' सम्पादकीय पढ़ा। आपने जो विषय प्रस्तुत किया, काफी गम्भीर है। मैंने इसके बारे में हिन्दी प्रचारक संघर्ष समिति, दिल्ली को लिखा था। कोई उत्तर नहीं मिला। साहित्यकारों में अग्रणी प्रेमचंद की स्मृति बनाने की नींव 8 अक्टूबर 1959 में पड़ी। लम्बे अरसे से स्मृति बनाने में लोगों के मन में ध्यान नहीं आया। खेद की बात है कि सरकार कुछ भी नहीं करेगी। जनता-याने कुछ साहित्यकार ही, आगे बढ़कर सार्वजनिक क्षेत्र बनाकर यह कार्य आगे बढ़ायें तो भारत में हिन्दी संस्थाएँ आगे बढ़ सकती हैं।

—बी०एस० शांता बाई
प्रधान सचिव,
कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, बैंगलोर

महाश्वेता देवी कृत 'कथन' तथा 'त्रिलोचन दु:ख के सागर में' दोनों हृदयस्पर्शी हैं। एक सारस्वत का दूसरे सारस्वत को सम्मान देना, विनम्रता से आदर करना, इससे दोनों का गौरव अभिवृद्ध होते देखा। वैसे भाषा तो किसी भी प्रदेश तक सीमित नहीं ही होती। यहाँ पर बंगाली हिन्दी की वन्दना कर रही है और हिन्दी बंगला को अपने में समेटे हुए है वैसा आदरणीया महाश्वेता देवी का

रुख पढ़ने को मिला। हाँ, भाषा तो सीमा के पार भी दौड़ती ही रहती आई है, जो यहाँ इन दोनों प्रतिभाओं में ही पढ़ने को मिला।

प्रगतिशील कवि त्रिलोचनजी का दु:खद चित्रण भी पढ़ा। कभी तो जाना ही है, तथापि किसी को ऊँचाई पर आसीन होने के बाद स्मृतियों की जब अपने आप विदाई हो जाती है, तब हृदय द्रवित हो जाता है कि आखिर ऐसा क्यों? पृष्ठ 6 पर आपके चेहरे पर जो खुशी, आनन्द और जीवन का संतोष पढ़ा, इससे हमें भी प्रेरणा मिलती है। पत्रिकाएँ तो होती हैं पर पत्रिकाओं में भाव, लगाव, संवेदना और वह भी हार्दिक, सांप्रत अभिव्यक्ति के साथ तो अत्यन्त कम ही दिखाई देता है। केवल हिन्दी ही नहीं, और भाषाओं की पत्रिकाओं में मैं अक्सर पढ़ता रहा हूँ, जहाँ, 'मैं', 'अहं', 'धंधा', 'व्यापार', 'अपने रिश्तेदारों को आगे करना' आदि बहुत कुछ देखता रहा हूँ। जब कि 'भारतीय वाङ्मय' के सदा प्रत्येक पृष्ठ पर तरोताजा हृदय और यथार्थ पढ़ने में आया है। वैसे काफी श्रम व छानबीन के पश्चात ही ऐसा प्रकाशन हो पाता है।

—डॉ० रजनीकांत जोशी, अहमदाबाद

'भारतीय वाङ्मय' का सितम्बर अंक मध्य प्रदेश को समर्पित था। यह मानो इस क्षेत्र की साहित्यिक गतिविधियों का शोधपत्र था।

—दयानंद वर्मा, नई दिल्ली

'भारतीय वाङ्मय' का सितम्बर अंक मिला, पढ़कर आशानुरूप ही तृप्ति मिली। वर्तमान युग में हिन्दी के साहित्यकारों को अपेक्षित सम्मान न मिलने की आपकी चिन्ता प्रत्येक संवेदनशील व्यक्ति की चिन्ता है। सरकारी तंत्र की धीमी गति और राजनीतिक नेताओं की अवसरवादी नीति के फलस्वरूप एक साहित्यकार का सम्मान महज राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के निमित्त हो प्राय: कागजी होकर रह जाता है जैसा कि आपने बड़े बेबाकी तथा निर्भीक टिप्पणी के साथ लिखा है कि किस तरह लमही में 2005 में प्रेमचंद स्मृति शोध संस्थान स्थापित करने का निर्णय अब तक अमल में नहीं आया।

पत्रिका में मध्यप्रदेश की सांस्कृतिक-साहित्यिक प्रतिभाओं की गुरुत्वपूर्ण जानकारी संक्षिप्त कलेवर में देने का आपका प्रयास श्लाघनीय है। डॉ० सुरेन्द्र वर्मा के विचार शतप्रतिशत सटीक हैं कि गम्भीर अध्ययन के लिए किताबों की शरण में जाना ही पड़ता है, किन्तु आज चिन्ता इस बात की हैं कि गम्भीर अध्येता ही अत्यल्प हो रहे हैं। अधिकांश जन टी०वी० में ही आँख फोड़ रहे हैं और आनंदमग्न हैं। इससे अधिक की ज्ञानगंगा में अवगाहन करने को इच्छुक व्यक्ति इंटरनेट तक की यात्रा कर रहे हैं, किन्तु यह भी आश्वस्त करने की बात है कि जब तक ऊर्जावान सभ्य सुसंस्कृत रहने की इच्छा रखने वाले लोग रहेंगे, भले ही वे संख्या में थोड़े हों, पुस्तकें बनी रहेंगी क्योंकि पुस्तकों का कोई स्थापन्न नहीं है अत: पढ़ने का न केवल सिलसिला जारी रहेगा बल्कि समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में पुस्तकों की अहम् भूमिका भी बनी रहेगी। यह पत्रिका अपने लघु-कलेवर में भी अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण ज्ञानवर्धक, विचारोत्तेजक तथा संवेदनापूरित है और संग्रहणीय है।

—डॉ० कुसुम राय, बर्द्धवान

मैं 'भारतीय वाङ्मय' का नियमित पाठक हूँ। पत्रिका समय पर मिल जाती है इस बात की खुशी है। सितम्बर 2007 के अंक में 'और एक प्रेमचंद जयंती यह भी' शीर्षक से आपका सम्पादकीय भी पढ़ा। दिल दहलानेवाली बात आपने लिखी है। अगर हमारे भीतर थोड़ी-सी सहानुभूति-संवेदना बची होती तो यह दिन देखना नहीं पड़ता। हम तो इस 'कौरव सभा' में बैठे अंधमन हैं जो साहित्य में उभर रहे बाज़ारवाद, दंभ, कृत्रिमता, विदेशीपन, गैर-सांस्कृतिकवाद, पाश्चात्य सभ्यता से ग्रस्त लेखक-साहित्यकार आदि को बर्दाश्त रहे हैं।

प्रेमचंद हों या दिनकर-जन्मशती वर्ष, जन्मशती आदि का एलान करके समारोहों का आयोजन करेंगे, प्रस्ताव पारित करेंगे, तस्वीरें खिचवाएँगे फिर अखबार में सब छप जाने के बाद इतिश्री। हम दंभी, मिथ्याभिमानी, कायर और चापलूस होते जा रहे हैं। प्रसिद्ध साहित्यकार नपातुला बोलेंगे, लिखेंगे। ऐसे में पूँजीवाद-सामंतवाद का विरोध कौन करेगा? केवल दिखावा और वाह्याडम्बर ही शेष रह गया है। दिवंगत साहित्यकार के आत्मजनों की कोई सुध ही नहीं लेता। केवल 'अमुक-तमुक' तिथि पर सरकारी खर्च से तमाशा करेंगे और 'तगड़ा' (भारी) टीए + डीए लेकर लौट आयेंगे।

मान्यवर, आपको जब-जब पढ़ता हूँ, लगता है, आप के भीतर धधकता हुआ लावा है जिस पर राख अभी पड़ी है। मुझे याद आ रहा है, दुष्यन्त जो कहता था—

एक चिन्गारी कहीं से ढूँढ लाओ दोस्तों,
इस दिये में तेल से भींगी हुई बाती तो है।

—डॉ० गिरीश जे. त्रिवेदी, राजकोट

हिन्दी अधिकारी होने के नाते अपना सौभाग्य समझती हूँ कि 'भारतीय वाङ्मय' जैसी उत्कृष्ट पत्रिका पढ़ने को मिली। 'गागर में सागर' की तरह इस पत्रिका में जो सामग्री समेटी गई है, वह पठनीय है। सम्पादकीय के माध्यम से प्रेमचंद स्मृति संस्थान की उपेक्षा और सरकारी अनुदानों के दुरुपयोग का जो वर्णन आपने किया, उसे पढ़कर दु:ख होता है। लगता है हमारे देश में अभी वह सांस्कृतिक चेतना नहीं आई है कि हम किसी साहित्यकार का सम्मान कर सकें। क्षणिक भावावेश में सरकारी घोषणाएँ कर दी जाती हैं, परन्तु उन पर अमल आकाशकुसुम बन जाता है। घोषणा करने और उसे क्रियान्वित करनेवालों की प्राथमिकताएँ बदल जाती हैं। हिन्दी के धुरंधर जितनी जुगत विश्व हिन्दी सम्मेलन के बहाने विश्व-भ्रमण के लिए लगाते हैं उसका अल्पांश भी यदि इन कार्यों में लगाएँ तो हमारे साहित्यकार और साहित्य दोनों ही संरक्षित रह सकते हैं। श्रेष्ठ पत्रिका के प्रकाशन के लिए साधुवाद स्वीकार करें। **—डॉ० ज्योति उपाध्याय,** हिन्दी अधिकारी, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

'भारतीय वाङ्मय' हिन्दी के विद्यार्थी व शोधार्थी के लिए तो आवश्यक है ही, हिन्दी-साहित्यकारों के लिए भी अपने परिवार को देखने और प्रेरित होने के लिए आवश्यक हो गया है। सितम्बर 07 के अंक में 'त्रिलोचनजी' के बारे में आपने हृदयस्पर्शी समाचार दिये हैं। इसके लिए विशेष साधुवाद। त्रिलोचनजी ने मुझसे पण्डित रामबालक शास्त्री के बारे में कुछ लिखने को कहा था क्योंकि वे मेरे श्वसुर लगते थे लेकिन आजतक त्रिलोचनजी के निर्देश का पालन न कर सका, इसका मुझे खेद है। त्रिलोचन जी ऋषि हैं।

आज मोदीजी ने 'भारतीय वाङ्मय' के द्वारा मानो स्पष्ट संदेश दे दिया है कि देश के ख्यातिलब्ध हिन्दी संस्थान कुछ दिनों के लिए विश्राम करें। सारा काम हिन्दी के इस गजेटियर से हो ही रहा है। सीमित या अतिसीमित शब्दों में असीम जानकारी देनेवाली यह पत्रिका हिन्दी संसार में बेजोड़ है।

—राधा मोहन उपाध्याय, हावड़ा

'भारतीय वाङ्मय' का सितम्बर 2007 अंक मिला। आपका अनुरोध सहृदय पाठकों से निवेदन पढ़कर हर्ष हुआ। इस अंक में प्रेमचंद स्मृति संस्थान, प्रेमचंद जयंती, प्रेमचंद की बूढ़ी काकी, कहाँ गये प्रेमचंद, पढ़कर शिक्षण कार्य के समय पढ़ाई गयी कहानी बूढ़ी काकी का सजीव चित्र उपस्थित हो गया। इसी अंक में मध्य प्रदेश की साहित्यिक-सांस्कृतिक प्रतिभा आलेख विद्वतापूर्ण है। **—गोपालदास अग्रवाल,** चित्रकूट

'भारतीय वाङ्मय' का अंक 10, अक्टूबर 2007 प्राप्त हुआ। अंक लघु पर समृद्ध है। कृपया वर्ष 2006 के अद्यावधि तक के गत समय के अंक उपलब्ध करा दें, वी०पी०पी० या पंजीकृत।

—प्रो० सर्वदानन्द द्विवेदी, उन्नाव

लखनऊ के पुस्तक मेले के एक स्टॉल से आपकी पत्रिका 'भारतीय वाङ्मय' का एक अंक मिला। अपने लघु कलेवर में विचारवान सामग्री पत्रिका खोलते ही तृप्त कर गई, कांतिकुमार जैन का 'नामवरजी का कूड़ा प्रपंच', डॉ० त्रिभुवन सिंह का संस्मरण, 'भारतेन्दु'जी की विशेष सामग्री उस पर नलिनीकांत जैसे वयोवृद्ध किन्तु सजग साहित्यकार का सभी कुछ सधा-सधाया-सजा-सजाया, मैं तो इसे पढ़कर यही कहूँगा कि बड़ी देर हो गई इसे प्राप्त करने में। **—निर्मल शुक्ल,**
सम्पादक-उत्तरायण, लखनऊ

'भारतीय वाङ्मय' का अक्टूबर अंक प्राप्त हुआ। 'भारतीय वाङ्मय' के लिए जो आदर रहा है उसमें इस अंक से भी अभिवृद्धि हुई है। रामसेतु के सम्बन्ध में आपने जो लिखा वह आपकी बहुआयामी विज्ञता का परिचायक है और आपके अनुभवजन्य उद्‌गार भी बहुत मन को छूने वाले होते हैं। हिन्दी पुस्तकों की निराशाजनक स्थिति का विवेचन इस अंक में भी हृदयस्पर्शी है और पत्रकारिता की प्रवीणता है कि उसके पास ही 'अमर उजाला' से उद्धरण है।—**राजेन्द्रशंकर भट्ट,** जयपुर

'भारतीय वाङ्मय' का अक्टूबर 2007 अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका में प्रकाशित 'भारतीय आस्था का प्रतीक रामसेतु' तथा 'दुर्गापूजा : साहित्यिक-सांस्कृतिक पर्व' पढ़कर आपकी लेखनी को सादर प्रणाम करता हूँ। इस अंक ने अनेक रूपों में मुझे नया ज्ञान दिया है।

—**सम्पादक,** विषयवस्तु, दिल्ली

लखनऊ में आयोजित राष्ट्रीय पुस्तक मेला-07 में विश्वविद्यालय प्रकाशन के स्टॉल पर 'भारतीय वाङ्मय' मासिक की प्रति मिली। पत्रिका पढ़कर अभिभूत हो गया। उसमें किताबों की दुनिया की सैर की। साहित्यिक एवं सांस्कृतिक समाचारों को पढ़ा एवं सारगर्भित, स्तरीय आलेखों का अनुशीलन करके आनन्दित हुआ।

—**डॉ० मिर्ज़ा हसन नासिर,** लखनऊ

'भारतीय वाङ्मय' बराबर मिल रहा है, धन्यवाद। सम्पादकीय बड़े उद्‌बोधक होते हैं। आप प्रसादजी तथा अन्य साहित्यकारों के जो संस्मरण लिख रहे हैं उन्हें लिखते रहिए, बड़े रोचक हैं। —**सत्यनारायण मिश्र,**

सम्पादक, जीवन प्रभात, मुम्बई

'भारतीय वाङ्मय' का अक्टूबर 07 अंक मिला, आभारी हूँ। इसमें 'रामसेतु' पर आपका सम्पादकीय अत्यन्त जोरदार और प्रासंगिक है, साधुवाद। कुछ वामपंथी आलोचक पुराने मूल्यों को उखाड़-पछाड़ कर ही नयी स्थापना देते रहते हैं। इस रवैये से किसी संगोष्ठी में जहाँ वे लगातार चर्चित रहते हैं, वहीं उनके नामचीन अजीबोगरीब विचार पुनरालोचित होकर पूर्वापेक्षा पुष्टतर ही हो जाते हैं। ऐसे आलोचकप्रवर पर श्री कान्तिकुमार जैन का 'कूड़ा-प्रपंच' लेख सटीक निशाना लगाता है। इसी पुष्टि में मुझे दो दशक पूर्व (9 फरवरी 88) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आयोजित मैथिलीशरण गुप्त जन्मशती संगोष्ठी की याद आ गयी। उसके उद्‌घाटन भाषण में भी उक्त आलोचकप्रवर ने 'हिन्दू' काव्यप्रणेता गुप्तजी को राष्ट्रकवि माने जाने पर प्रश्नचिह्न लगाते हुए सनसनी फैलाई थी जबकि गुप्तजी को यह उपाधि पहले सन् 36 में किसी राजसत्ता ने नहीं, बल्कि, जन-हृदय गाँधीजी ने वहीं उनके अभिनन्दन में दी थी। मैंने उसी अपराह्न अपने भाषण में अध्यक्ष डॉ० शिवप्रसाद सिंह के समक्ष कहा था कि जिन्हें 'हिन्दू'-प्रणेता अराष्ट्रीय या साम्प्रदायिक लगते हैं उन्हें उनके 'किसान, गुरुकुल, काबा और कर्बला' आदि को भी पढ़ लेना चाहिए।

तो, वही हाल उन्होंने पंतजी का भी महादेवी संगोष्ठी में कर दिया। प्रश्न है—क्या किसी बड़ी रेखा को मिटाए बिना दूसरी रेखा खींची नहीं जा सकती? पता नहीं, शायद, पंत-संगोष्ठी में निरालाजी की हुलिया न बिगाड़ी जाय। यह चलन बन्द हो तभी वस्तुनिष्ठ समीक्षा का द्वार उन्मुक्त होगा और फतवावादी आलोचना कुंठित होगी।

डॉ० अवधेश प्रधान लिखित '...हिन्दी का गुरुकुल' शीर्षक लेख सूचनाप्रद तो है पर उसमें अध्यक्ष पीढ़ी का एक यशस्वी नाम डॉ० त्रिभुवन सिंह छूट ही गया। कहना न हो कि इन्होंने अपने समय कथा-साहित्य की समीक्षा का कीर्तिमान तो बनाया ही, भारतेन्दु, गुप्तजी आदि पर राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित कर विभाग को ऊर्जित किया था।

वयोवृद्ध भाषाविद् बदरीनाथ कपूर के अमृत महोत्सव का समाचार जहाँ सुखद रहा, वहीं बन्धुवर डॉ० शुकदेव सिंह की हठात् गमी की खबर दु:खदायी रही।

'भारतीय वाङ्मय' साहित्यिक आयोजनों-कार्यक्रमों-प्रकाशनों-पुरस्कारों की अद्यतन जानकारी देने के कारण साधुवाद योग्य है।

आपकी पत्रिका चिरायु हो, यही कामना है।

—**तपेश्वरनाथ,** भागलपुर

'भारतीय वाङ्मय' का अक्टूबर अंक मिला। श्री कान्तिकुमार जैन का लेख 'नामवरजी का कूड़ा प्रपंच' पढ़ा, अच्छा लगा। आपने पंतजी की रचनाओं के बारे में जो अपने विचार लिखे, बहुत ठीक लगे। सभी बड़े साहित्यकारों की सभी रचनाएँ बहुत अच्छी हों, उच्चकोटि की हों, जरूरी नहीं। जो महान हैं वे महान ही रहेंगे। आपकी इस पत्रिका में बहुत-सी साहित्यिक नई जानकारियाँ मिलती हैं तथा वे ऐतिहासिक होती हैं। जैसे 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की प्रथम जयन्ती', 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय हिन्दी का गुरुकुल' आदि। यह सब अन्य पत्रिकाओं में नहीं पढ़ने को मिलता।

—**विनोदशंकर गुप्त,** हिसार

लखनऊ में आयोजित राष्ट्रीय पुस्तक मेले में आपके प्रकाशन के स्टॉल से मुझे 'भारतीय वाङ्मय' का अक्टूबर 07 अंक मिला। अंक पठनीयता की दृष्टि से बहुत ही अच्छा बन पड़ा है, भारतीय आस्था के प्रतीक रामसेतु पर आपका विद्वतापूर्ण लेख प्रासंगिक है। 'नामवर जी का कूड़ा प्रपंच' कांति कुमार जैन जी का लेख भी अत्यन्त सटीक है। सभी पुस्तक समीक्षाएँ समदृष्टिपूर्ण हैं जबकि शेष सभी सूचनाएँ व समाचार जानकारी बढ़ाते हैं, एक संक्षिप्त परन्तु संतुलित वैचारिक आयोजन के लिए मेरी बधाई एवं साधुवाद।

—**राहुल देव,** सीतापुर

शीघ्र प्रकाश्य

जनसंचार : सिद्धान्त एवं भाषा विमर्श

डॉ० अवधेशनारायण मिश्र
राजेशनारायण द्विवेदी

प्रथम संस्करण : 2008

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

ज्ञान, अनुभव, संवेदना और यहाँ तक कि अस्तित्व में होनेवाले परिवर्तनों की साझेदारी 'संचार' नामक प्रक्रिया से ही सम्भव होती है। 'जनसंचार' इसी जटिल प्रक्रिया का एक प्रकार है। यह तकनीकी आधार पर व्यापक रूप में लोगों तक सूचना के संग्रह एवं प्रेषण पर आधारित प्रक्रिया है। जनसंचार का प्रवाह अतिव्यापक एवं असीमित होता है। आज इसका क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि उसे किसी सुनिश्चित परिधि में बाँधना श्रम-साध्य कार्य है। इस विषय पर लिखी गई अधिसंख्य पुस्तकों में जनसंचार को शाश्वत-ज्ञान-प्रणाली से जोड़ने तथा सर्वतन्त्र-स्वतंत्र अनुशासन मानने का पूर्वाग्रह दिखाई देता है। आज जबकि एक सशक्त यान्त्रिक-प्रणाली के बिना जनसंचार की अवधारणा ही नहीं की जा सकती तो हम इसे शाश्वत से कैसे जोड़ सकते हैं? काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रो० अवधेशनारायण मिश्र तथा उनके शिष्य डॉ० राजेशनारायण द्विवेदी द्वारा लिखित पुस्तक '**जनसंचार : सिद्धान्त एवं भाषा विमर्श**' ऐसे तमाम भ्रमों तथा शंकाओं से निजात दिलाती है।

जनसंचार की सभी संचार-प्रणालियों पर दृष्टिपात करते हुए लेखकद्वय ने उसे तकनीकी-विकास के यथार्थ के प्रतिरूप की तरह देखा है। अस्तु, यह पुस्तक जनसंचार को आधुनिक समाज-विज्ञान के नजरिये से देखने का सफल प्रयत्न है।

संस्कृति और जनसंचार के सम्बन्धों पर जारी बहस और उससे उपजे प्रश्नों, जिनसे संचारविदों और संस्कृतिकर्मियों के समान सरोकार हैं, का हल ढूँढ़ने की कोशिश की गयी है। जनमाध्यमों की प्रकृति की विवेचना के क्रम में सभी प्रमुख विचारधाराओं, विचारकों एवं उनके सिद्धान्तों पर संतुलित ढंग से विचार किया गया है। संचार प्रतिदर्शों की बोधगम्य व्याख्या प्रो० मिश्र के पत्रकारिता की कक्षाओं में लम्बे अध्यापन-अनुभव का ही परिणाम है। इस पुस्तक में जनसंचार के सैद्धांतिक पक्ष पर तो विस्तृत चर्चा है ही, साथ-साथ उसके भाषिक पक्ष का जो सम्यक् अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है—वह अन्यतम है।

यह पुस्तक विश्वविद्यालयों-महाविद्यालयों में पत्रकारिता का अध्ययन कर रहे छात्रों तथा विभिन्न प्रतिष्ठानों में कार्यरत मीडियाकर्मियों के लिए सर्वथा पठनीय व संग्रहणीय है।

स्मृति-शेष

पद्मभूषण लक्ष्मीमल्ल सिंघवी का पुण्य स्मरण

7 अक्टूबर 2007 को **डॉ० लक्ष्मीमल्ल सिंघवी** का निधन अपने देश की ही नहीं विश्व मानवता की अपूरणीय क्षति है। संयुक्त राष्ट्रसंघ, यूनेस्को तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में भारत के प्रतिनिधि तथा इंगलैण्ड में भारत के उच्चायुक्त के रूप में काम करते हुए उन्होंने ऐसा प्रभामण्डल अर्जित किया था जिसकी आलोक-रश्मियाँ अपने देश की सीमा के बाहर भी दूर-दूर तक अक्षर की दुनिया के लोगों को चमत्कृत एवं आन्दोलित करती थीं। सिंघवीजी संसार के जाने-माने विधि-विशेषज्ञों में अपना स्थान रखते थे। इस क्षेत्र में उनकी गौरव-गरिमा का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि संसार के कई देशों के संविधान के निर्माण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। लम्बे समय तक अपने देश में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कार्यक्षेत्र सम्बन्धित किसी जटिल प्रश्न पर उनकी राय सबसे अहम मानी जाती रही है।

विधि-विधान की दुनिया प्राय: नीरस होती है किन्तु सिंघवीजी का व्यक्तित्व और कृतित्व इस दुनिया के बाहर जितना महनीय एवं विस्तीर्ण है वह अद्‌भुत एवं बेमिसाल है। कवि, लेखक, रचनाकार, पत्रकार, विचारक, वक्ता और संस्कृतिकर्मी के रूप में उन्होंने लगातार जो योगदान किया है वह अविस्मरणीय है। प्रखर सांसद के रूप में तो उनकी भूमिका विशिष्ट रही है। अपनी बहुमुखी भूमिकाओं के बीच वे जीवन के प्रारम्भ से लेकर आखिरी साँस तक हिन्दी भाषा और साहित्य के अनन्य प्रेमी तथा उन्नायक थे। अस्वस्थता के बावजूद अन्तिम समय में भी विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लेने के लिए न्यूयार्क जाने का उन्होंने साहस दिखलाया। वहीं उनकी हालत बिगड़ी। वे स्वदेश लौटे। चिकित्सकों ने अथक प्रयास किया किन्तु उन्हें बचाया न जा सका।

डॉ० सिंघवी सर्वधर्म समभाव के जीते-जागते प्रतीक थे। राष्ट्रीय एकता और विकास के स्वप्नद्रष्टा के रूप में उनके विचार प्रेरक एवं प्रासंगिक बने रहेंगे। पद्मभूषण डॉ० विद्यानिवास मिश्र के आकस्मिक तिरोधान के बाद 'साहित्य अमृत' पत्रिका के सम्पादन का भार भी उन्होंने बड़ी कुशलता और निष्ठा के साथ सँभाला था। पत्रिका के नवम्बर 2007 अंक में प्रकाशित उनका अन्तिम सम्पादकीय उनकी तेजस्विता का परिचय देने के लिए पर्याप्त है।

विश्वविद्यालय प्रकाशन-परिवार के साथ भी उनका अत्यन्त आत्मीय सम्बन्ध रहा है। उनका तिरोधान हमारे लिए भी स्थायी अभावबोध का दु:खद विषय है। देश के इस महान सपूत के लिए 'भारतीय वाङ्मय' के पाठक-परिवार की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि।

डॉ० शुकदेव सिंह की याद

स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर में हिन्दी विभाग की ओर से प्रख्यात साहित्य-चिन्तक **प्रो० शुकदेव सिंह** के असामयिक निधन पर श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। **प्राचार्य डॉ० मान्धाता राय** ने कहा कि प्रो० शुकदेव सिंह एक सुलभ व्यक्ति, सफल लेखक एवं मेधा-सम्पन्न साहित्यकार थे। जातीय भेदभाव से दूर वे अच्छे अध्यापक के रूप में माने जाते थे। राजकीय महाविद्यालय, मुहम्मदाबाद के हिन्दी विभागाध्यक्ष **डॉ० रामप्रकाश कुशवाहा** ने कहा कि प्रो० शुकदेव सिंह वैचारिक अंतर्दृष्टि के कारण आकर्षक लगते थे। **विनयकुमार दुबे** ने प्रो० सिंह को आदर्श गुरु के रूप में याद किया। **डॉ० चन्द्रशेखर तिवारी** ने कहा कि प्रो० शुकदेव सिंह गाजीपुर जनपद के कीर्तिमान स्तम्भ थे। **प्रो० अजय राय** ने माना कि प्रो० शुकदेव सिंह उन गिने-चुने और शीर्षस्थ साहित्यकारों में स्मरणीय हैं जिन्होंने विचार, लेखन एवं वक्तृत्व तीनों ही स्तरों पर महारत हासिल की थी। **डॉ० हितेन्द्र मिश्र** ने कहा कि साहित्य के वैचारिक खेमों से अलग उनका व्यक्तित्व साहित्य की गहरी एवं सार्थक समझ का प्रतिमान है। **डॉ० प्रमोद कुमार श्रीवास्तव 'अनंग'** ने प्रो० शुकदेव सिंह की स्मृतियों को याद करते हुए उन्हें बड़ा चिन्तक-साहित्यकार बताया।

शैल चतुर्वेदी की स्मृति

हास्य-व्यंग्य के यशस्वी रचनाकार **शैल चतुर्वेदी** नहीं रहे। बड़े-बड़े कवि सम्मेलनों के मंचों से लेकर दूरदर्शन धारावाहिकों और सिने जगत तक उनकी अपनी पहचान थी। उन्मुक्त हास्य और चुटीले व्यंग्य के लिए वे जाने जाते थे। उनकी विशेषता यह थी कि हास्य को फूहड़ नहीं होने देते थे तथा कोशिश करते थे कि उनका व्यंग्य चोट पहुँचाने के साथ-साथ अच्छा रास्ता भी दिखलाए। सार्थक और साभिप्राय हास्य-व्यंग्य की प्रतिष्ठा के लिए वे जाने जाते थे। हाजिरजवाबी में उनका कोई जोड़ नहीं था। उनके निधन से इस विधा के क्षेत्र में जो खालीपन पैदा हुआ है, उसकी पूर्ति सम्भव नहीं दीखती। 'भारतीय वाङ्मय' के पाठकों की ओर से उनके लिए विनम्र श्रद्धांजलि।

डॉ० रवीन्द्रकुमार जैन को श्रद्धांजलि

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के उच्च शिक्षा एवं शोध संस्थान के पूर्व अध्यक्ष **प्रो० रवीन्द्रकुमार जैन** का निधन 19 अक्टूबर 2007 को कोयम्बटूर में हो गया। हिन्दी के वयोवृद्ध साहित्यकार, मानववादी कवि, समीक्षक और शोध-निर्देशक डॉ० रवीन्द्र जैन को श्रद्धांजलि समर्पित करने के लिए चेन्नई में विद्वानों एवं साहित्यप्रेमियों की सभा 25 अक्टूबर 2007 को हुई। साहित्यानुशीलन समिति के अध्यक्ष डॉ० इन्दरराज बैद ने श्रद्धांजलि देते हुए कहा कि डॉ० जैन बहुमुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार थे। उन्होंने हिन्दी की पहली आत्मकथा बनारसीदास कृत 'अर्ध कथानक' पर शोध-कार्य किया था। उनकी प्रेरणा और प्रोत्साहन से पचासों छात्रों ने मौलिक एवं तुलनात्मक शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके अपने व्यक्तित्व को विकसित किया। प्रोफेसर निर्मला मौर्य ने कहा कि साहित्यकार कभी अतीत नहीं होता। वह अपनी रचनाओं द्वारा सबके बीच जीवित रहता है। साहित्य के आचार्य तो वे थे ही, ओज और करुणा के भी प्रभावशाली कवि थे। इस अवसर पर डॉ० एन० सुदरम, डॉ० पी०के० बालसुब्रह्मण्यन, डॉ० रुक्माजी राव, डॉ० एम० शेषन, डॉ० एस० सुब्रह्मण्यन, डॉ० आर०एम० श्रीनिवासन, डॉ० वी० नारायणन, डॉ० पी०सी० कोकिला, डॉ० चुन्नीलाल शर्मा, श्री रतन चंद सावनसुखा, श्री शोभाकांतदास, श्री नरपतमल मेहता, श्री जवाहरलाल मधुकर, श्री प्रकाशमल भण्डारी, श्री पी०आर० वासुदेवन, डॉ० विद्या शर्मा और श्री प्रह्लाद श्रीमाली ने श्रद्धांजलि अर्पित की।

प्रो० कमलेशदत्तजी को पुत्रशोक

भारतीय साहित्य के अप्रतिम विद्वान तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत विद्याधर्म विज्ञान संकाय के आचार्य प्रोफेसर कमलेश त्रिपाठी के होनहार और संभावनाशील ज्येष्ठ पुत्र का पिछले दिनों दिल्ली में सहसा निधन हो गया। 'भारतीय वाङ्मय' परिवार परमात्मा से प्रार्थना करता है कि वह दिवंगत आत्मा को सद्‌गति तथा आदरणीय कमलेशदत्तजी को यह दुस्सह दु:ख सहने का धीरज प्रदान करे।

नाटककार चिरंजीव का निधन

7 अक्टूबर को सुप्रसिद्ध साहित्यकार, लेखक और अनेक अभिनेय नाटकों के रचयिता पद्मश्री **चिरंजीव** का निधन हिन्दी के नाट्य साहित्य की भारी क्षति है। वे काशी नागरी प्रचारिणी सभा से भी सक्रिय रूप में संबद्ध थे। 'भारतीय वाङ्मय' परिवार की ओर से भावभीनी श्रद्धांजलि।

केशव चन्द्र शर्मा

26 नवम्बर को इलाहाबाद में कवि, लेखक और समालोचक **केशवचन्द्र शर्मा** का देहान्त हो गया। उनके ज्येष्ठ पुत्र अनुपम कालिधर ने मुखाग्नि दी।

उसी दिन इलाहाबाद में कवि, कथाकार और अनुवादक **राधारमण अग्रवाल** का देहावसान हो गया। उनको दिल का दौरा पड़ा था। स्वर्गीय अग्रवाल अच्छे अनुवादक रहे। उन्होंने मराठी भाषा समेत फिलस्तीनी कहानियों तथा कविताओं का हिन्दी में अनुवाद किया था। वे 'पहल' पत्रिका के प्रबन्ध-सम्पादक रहे हैं।

डॉ० अरुणा सीतेश

हिन्दी के यशस्वी कथाकार तथा नई दिल्ली के इन्द्रप्रस्थ कॉलेज की प्रधानाचार्या **डॉ० अरुणा सीतेश** का लम्बी बीमारी से 19 नवम्बर को निधन हो गया।

समवेदना के पत्र

आदरणीय मोदीजी के निधन का दु:खद समाचार प्राप्त हुआ। मेरे लिए यह सूचना अकल्पनीय और हृदयविदारक थी। सितम्बर के अन्त में मुझे उनका पत्र मिला था। उनके जैसा सहृदय विद्वान और आदर योग्य मित्र को खोकर मैं अत्यन्त व्यथित हूँ। **—अच्युतानंद मिश्र,** कुलपति
माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल

वैसे तो कइयों को पुरुषोत्तमदासजी का स्नेह प्राप्त था, पर उनके न रहने से मेरे जीवन में जो रिक्तता आ गई है, उसे मैं समझा नहीं सकता। मैं बेहिचक उनके पास कई प्रकार की सहायता के लिए पहुँच जाता था। असल में उनके सहयोग के बिना 'आजकल' का बनारस विशेषांक का प्रकाशन प्राय: असम्भव था। उसी प्रकार बनारस सम्बन्धी पुस्तक के लिए उन्होंने और धीरेन्द्रनाथजी ने जो सहायता की थी, उसे मैं कभी भुला नहीं सकूँगा। मुझे सबसे बड़ा दु:ख यही है कि जब वह किताब निकलेगी तो यह दोनों अपने सहयोग का परिणाम नहीं देख सकेंगे।

—ओमप्रकाश केजरीवाल, सूचना आयुक्त,
केन्द्रीय सूचना आयोग, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' में पुरुषोत्तमदास मोदीजी के निधन का समाचार पढ़कर विश्वास नहीं हुआ कि हमारा पुराना साथी नहीं रहा। 'अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ' के माध्यम से मेरा उनसे परिचय हुआ और निरन्तर मिलते रहने से उनके प्रति मेरी श्रद्धा बढ़ती गई। बाद में मैं सक्रिय व्यवसाय हिन्दी बुक सेण्टर से वैराग्य लेकर अपने लेखन में जुट गया। प्रकाशन केवल अपनी लिखी पुस्तकों तक सीमित रहा। मोदीजी से परिचय बने रहने का एकमात्र साधन 'भारतीय वाङ्मय' रह गया। अनुरोध है कि उस पत्रिका का यह स्तर बनाये रखें। उस लघु कलेवर की पत्रिका में बड़ी पत्रिकाओं से अधिक पुस्तक तथा हिन्दी रचनाकार सम्बन्धी जानकारी होती है, यह पत्रिका उनका स्मृति-स्तम्भ बनकर चिरंजीवी हो, उससे उनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी।

—दयानन्द वर्मा, नई दिल्ली

भाई पुरुषोत्तमदासजी के निधन का समाचार सुनकर आघात लगा। काशी के साहित्याकाश का एक देदीप्यमान नक्षत्र अस्त हो गया। जन्म और मृत्यु जीवन के अवश्यम्भावी दो छोर हैं, किन्तु जीने-जीने में फर्क होता है। पुरुषोत्तमदासजी का सामाजिक जीवन सार्थक भाव में सक्रिय था। उनका साहित्यिक जीवन भी उज्जवलतर था। उनके निधन से जो रिक्तता आई है, उसकी पूर्ति कठिनाई से होगी। मेरे तो अभिन्न मित्र थे। उनके वियोग से मैं व्यथित हूँ।

—कालीचरण केशान, भिवानी (हरियाणा)

मैं पिछले सप्ताह ही विदेश प्रवास से वापस लौटी। आदरणीय मोदीजी के निधन की सूचना मुझे स्तब्ध कर गई। हिन्दी ने अपना एक वत्सल संरक्षक, विद्वान और हितैषी खो दिया। हिन्दी से जुड़ी अक्षय स्मृतियों का कोष उनके पास सुरक्षित था। मैं चाहती थी यह सारी सम्पदा जिज्ञासु पाठकों तक पहुँचे, सबकी साझेदारी हो किन्तु.....

स्वयं मेरे लिए मोदीजी का जाना एक अपूरणीय क्षति है। काशी बहुत सूना हो गया। उन सी गरिमा और सहज वत्सलता दुर्लभ है। आप सबको इस आघात को सहने की शक्ति दें ईश्वर।

—डॉ० सूर्यबाला, मुम्बई

पुरुषोत्तमजी का निधन बड़ा दु:खद है। उनसे मेरे विगत 50 वर्षों के अत्यन्त आत्मीय सम्बन्ध थे। उनमें साहित्य की अनन्य समझ थी। वे प्रकाशक भी श्रेष्ठ थे। व्यापारिक हानि-लाभ के स्थान पर आत्मीय सम्बन्धों का निर्वाह करनेवाले ऐसे प्रकाशक विरल ही हैं। मैंने उनके प्रकाशन-गृह से प्रकाशित होने वाले हर लेखक को उनकी प्रशंसा करते ही सुना। उन्होंने '**अब तो बात फैल गई**' नामक मेरी *संस्मरण पुस्तक* को जिस शीघ्रता, और सुरुचि से प्रकाशित किया, वह मैं भूल नहीं पाता। उनका न रहना मेरे लिए व्यक्तिगत क्षति है।

—डॉ० कान्तिकुमार जैन, सागर

'साहित्य अमृत' के नवम्बर 07 के अंक में दिवंगत पुरुषोत्तमदास मोदी पर डॉ० बदरीनाथ कपूर का आलेख पढ़ा। मैं मोदीजी को काफी अरसे से जानता था। उनसे पत्र-व्यवहार भी रहा। उनकी पत्रिका 'भारतीय वाङ्मय' मेरी प्रिय पत्रिकाओं में रही है, परन्तु इस सब के बावजूद कपूर साहब के आलेख से मोदीजी के सम्बन्ध में अनेक नई जानकारियाँ मिलीं। मेरे हृदय में उनके प्रति जो श्रद्धा है, वह द्विगुणित हो गई। कपूर साहब ने बिलकुल ठीक ही लिखा है कि पुरुषोत्तमजी 'पुरुष-उत्तम' थे।

—विश्वनाथ, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

भाई पुरुषोत्तमदास मोदीजी ने हिन्दी साहित्य के अनेक अनूठे सन्दर्भ ग्रन्थ प्रकाशित कर भारतीय साहित्य में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। 'काशी का इतिहास' ही एक ऐसी कृति है जो आने वाले अनेक वर्षों तक पाठकों को उनकी याद दिलाता रहेगा। वे दूरद्रष्टा व शान्त स्वभाव के व्यक्ति थे। भगवान उस महान आत्मा को सद्गति प्रदान करें। हिन्दी प्रकाशक संघ में भी उनका योगदान स्मरणीय रहेगा। महामंत्री के नाते तथा 'हिन्दी प्रकाशक' पत्रिका के मुख्य सम्पादक के नाते प्रकाशन जगत को उनकी बहुत बड़ी देन है। हिन्दी प्रकाशन उद्योग का इतिहास कभी लिखा जाएगा तो पुरुषोत्तमदास मोदीजी की सेवाओं के लिए उनका नाम प्रथम पंक्ति में अंकित रहेगा, मेरा ऐसा विश्वास है।

—सुखपाल गुप्त, एपीसी बुक्स, नई दिल्ली

आदरणीय पुरुषोत्तमदासजी मोदी के असामयिक निधन की सूचना पाकर स्तब्ध रह गया। कुछ दिन पूर्व ही पत्रिका की सार्थकता के विषय में उन्हें पत्र लिखा था। उत्तर के बजाय शोक-सूचना मिली। मोदीजी ने साहित्य की बड़ी सेवा की है। अनेक रचनाकार तथा साहित्यप्रेमी माँ सरस्वती के भक्तों की आराधना से परिचित होते रहे। इस परोक्ष संवाद का श्रेय पुरुषोत्तमदासजी को जाता है। **—प्रकाश दुबे,** प्रधान सम्पादक,
दैनिक भास्कर, नागपुर

मुझे आशुतोष शुक्ल से मालूम हुआ कि पुरुषोत्तम मोदीजी स्वर्गगत हो गए। यह जानकर मुझे बहुत दु:ख हुआ। मैं भगवान से मोदीजी की शान्ति के लिए प्रार्थना करती हूँ। मोदीजी की याद मेरे दिल में रहेगी।

टोरिनो के ओरियण्टल स्टडीज के विभाग के प्रोफेसर (Prof. Piano, Pelissero evam Consolaro), शोधार्थी एवं विद्यार्थी आपको अपनी शोक-संवेदना का सन्देश मेरे द्वारा भेज रहे हैं। **— Prof. Pinuccia Caracchi**
Department of Oriental Studies
University of Torino, Italy

पुरुषोत्तमदास मोदी के निधन से मुझे गहरी क्षति पहुँची ही पर सभी मूल्यनिष्ठ हिन्दीप्रेमियों के लिए भी यह अविस्मरणीय अभाव की घड़ी है। प्रकाशन क्षेत्र में उनका योगदान निश्चित उल्लेखनीय है। उनका 'भारतीय वाङ्मय' सचमुच उनकी बहुज्ञता, मूल्यबद्ध पत्रकारिता का सबसे बड़ा स्मारक है, जीता जागता उदाहरण है। कीर्तिशेष मोदीजी का बहुआयामी व्यक्तित्व उसमें से परिलक्षित होता था व उसकी सामग्री पर मोदीजी की अपनी अनूठी छाप रहती थी।

आश्वस्त हैं, आप मोदीजी के साहित्यिक,

पत्रकारिता-संस्कारों से सम्पन्न उनकी परम्परा को आगे बढ़ाते रहेंगे।

—सत्येन्द्र चतुर्वेदी, लोक शिक्षक, जयपुर

यह जानकर स्तब्ध रह गया कि आदरणीय पुरुषोत्तमदास मोदीजी गोलोकवासी हो गए। मोदीजी ने हिन्दी प्रकाशन के क्षेत्र में मिशनरी की भावना से कार्य करते हुए कीर्तिमान स्थापित किये थे और समस्त प्रतिकूलताओं के मध्य अपना मार्ग स्वयं ही निर्मित किया था। पूज्यपाद गुरुदेव आचार्य पं० सीताराम चतुर्वेदीजी उनकी प्राय: चर्चा किया करते थे और उन्हें बहुत स्नेह करते थे। मोदीजी के अनुरोध पर ही आचार्यजी ने प्रसादजी पर संस्मरण लिख भेजा था। ऐसे प्रखर रचनाधर्मी, यशस्वी प्रकाशक ओर सहृदय को ईश्वर अपने चरणों में स्थान देंगे।

—डॉ० प्रदीप जैन, मुजफ्फरनगर

मैंने 'साहित्य अमृत' में पुरुषोत्तमदास मोदीजी के स्वर्गवास का दु:खद समाचार पढ़ा। पढ़कर बहुत दु:ख हुआ। अक्टूबर 07 के अंक में उनका लेख पढ़ा था।

—विनोदशंकर गुप्त, पुत्र स्व० गुलाब राय
हिसार

मोदीजी के स्वर्गवास के विषय में जानकर दु:ख हुआ। श्रद्धेय मोदीजी के लिए प्रकाशन व्यवसाय मात्र ही नहीं था वरन् मिशन था। उन्होंने ऐसे अनेक दुर्लभ एवं संग्रहणीय ग्रन्थ प्रकाशित किये जिन्हें सामान्य प्रकाशन व्यवसायी प्रकाशित नहीं कर सकते। हिन्दी साहित्य के ऐसे समर्पित प्रकाशक अब विरल ही हैं। उनके प्रति मैं हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

—डॉ० शरद नागर, लखनऊ

दिल्ली के एक अखबार से पता चला कि हमारे अभिन्न मित्र, सहयोगी और हमेशा स्मृति में रहनेवाले सहयोगी पुरुषोत्तमजी मोदी ने शरीरत्याग दिया। उन्होंने हमारे साथ ही अपनी व्यावसायिक यात्रा आरम्भ की थी। पुस्तक व्यवसाय और प्रकाशन जगत में उन जैसा व्यक्तित्व, लगन, प्रतिभावान व्यक्ति हमने नहीं देखा। वे एक ऐसे वट-वृक्ष थे, जिनसे सभी को प्राण-वायु मिलती थी।

—केदार साथी,
साथी प्रकाशन, सागर

पुरुषोत्तमदास मोदीजी के निधन से केवल हिन्दी के प्रकाशन जगत को ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण साहित्यिक बिरादरी को गहरा धक्का लगा है। वे कुशल व्यवसायी व प्रकाशक ही नहीं, बल्कि प्रकाशन जगत के गिने-चुने बौद्धिक क्षमता वाले व्यक्तियों में थे।

—स्वदेश कुमार, अक्षरा, गोरखपुर

परम स्नेही आदरणीय बन्धुवर पुरुषोत्तमजी के काशीलाभ की सूचना पाकर गहरा धक्का लगा। वैसे उनसे मेरी मुलाकात न थी, पर पत्रों के माध्यम से ही हमारा एक-दूसरे के प्रति ऐसा स्नेह-भाव विकसित हो गया था, जो सहज और अहेतुक था। भगवान शंकर दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—गोपाल राय, समीक्षा, नई दिल्ली

श्री मोदीजी के निधन का समाचार पाकर मैं स्तब्ध हो उठा क्योंकि यह घटना 6 अक्टूबर 2007 की है। उसी दिन शाम को लखनऊ पुस्तक मेले में मैं आपके स्टाल पर था। 'भारतीय वाङ्मय' में अपने स्पष्ट और निष्पक्ष सम्पादकीय लेखन से वे सम्पूर्ण साहित्य जगत या यों कहें कि पूरे देश में छा गये थे। मेरे उनके सम्बन्धों के विविध अवसरों की स्मृतियाँ मानस-पटल पर कौंधने लगीं।

—पृथ्वीपाल पाण्डेय, लखनऊ

डॉ० कान्तिकुमार जैन (सागर) ने मेरे अग्रजतुल्य पुरुषोत्तमदास मोदीजी के आकस्मिक निधन की सूचना दी, अपार दु:ख हुआ। उनकी मृत्यु से हिन्दी संसार की अपूरणीय क्षति हुई है। मैं आश्वस्त हूँ कि मोदीजी ने पत्रकारिता और हिन्दी के प्रकाशन में जो कीर्तिमान स्थापित किए हैं वे आपके हाथों में सुरक्षित रहेंगे और जो बुलंदी मोदी साहब में थी उनकी अनुपस्थिति में उसको यथावत रखेंगे।

—अवधबिहारी पाठक, दतिया, मध्य प्रदेश

'भारतीय वाङ्मय' के नवम्बर 2007 की इस दु:खद सूचना से मैं स्तब्ध हूँ कि 'पत्र' के यशस्वी सम्पादकाचार्य एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी मान्यवर पुरुषोत्तमदासजी मोदी हमारे मध्य नहीं रहे, ब्रह्मलीन हो गए। सौभाग्यवश मोदीजी के सारस्वत व्यक्तित्व से तो मैं सुपरिचित था किन्तु दुर्भाग्यवश पाञ्चभौतिक शरीर का प्रत्यक्ष मैं न कर सका था। 'भारतीय वाङ्मय' के सम्पादकीयों का नियमित पाठक होने के कारण उनके कृतित्व से प्रेरणा लेता रहा और सचमुच, जैसी छवि मेरे मानस पटल पर उनकी थी, वैसी ही दिखी, जो 'भारतीय वाङ्मय' के नवम्बर अंक में संलग्न चित्र-संग्रह में उभरती है। उनकी साहित्य कीर्ति अमर रहेगी।

—आचार्य डॉ० महेशचन्द्र शर्मा, भिलाई

मुझे आपके पिताश्री के निधन की दु:खद सूचना मिली। मोदीजी के महाप्रयाण से जो क्षति हुई है, उसकी तो भरपाई हो पाना कठिन है। इससे हिन्दी-जगत की जो अपूरणीय क्षति हुई है, उससे मैं अत्यन्त ही मर्माहत हूँ। मेरे ऊपर उनकी जो स्नेहदृष्टि रहती थी, उसकी कल्पना करके मैं अश्रुपूरित हो जा रहा हूँ।

—डॉ० आद्याप्रसाद द्विवेदी, गोरखपुर

गोरखपुर से बाहर था। लौटने पर 'साहित्य अमृत' के नवम्बर अंक में मोदीजी के निधन का समाचार मिला। परमात्मा उनकी आत्मा को चिरशांति प्रदान करें।

—प्रो० रामदेव शुक्ल, गोरखपुर

मोदीजी के दिवंगत होने का समाचार सर्वप्रथम डॉ० रामचन्द्र तिवारी ने दिया और फिर पत्र में पढ़ा भी। इस दु:खद समाचार से मैं अति आहत हुआ। मेरा उनसे सम्बन्ध 20 वर्ष पुराना रहा। वह एक अच्छे मित्र एवं भले व्यक्ति थे। मोदीजी ने जीवन-यात्रा में कभी न तो पीछे मुड़कर देखा और न ही कहीं रुके ही; वह आगे बढ़ते ही रहे। वह कर्मठ एवं सुलझे विचारों के व्यक्ति थे। उनका अभाव हिन्दीजगत को खलता रहेगा।

—प्रताप सिंह, गोरखपुर

'साहित्य अमृत' पत्रिका के स्वनामधन्य, शुद्ध भारतीय ऐसे लक्ष्मीमल्ल सिंघवीजी को छीन लिया गया और 'भारतीय आस्था का प्रतीक रामसेतु' जैसे गुरु गम्भीर सम्पादकीय लिखनेवाले ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध एवं चिंतक ऐसे पुरुषोत्तमदास जी भी.... !!

सच कहता हूँ, अब सदमा बरदाश्त नहीं कर सकता। पुरुषोत्तमदासजी 'भारतीय वाङ्मय' के लिए 'नींव की ईट' थे जिनकी बदौलत आज 'साहित्य भवन' देदीप्यमान है। मैंने 'भारतीय आस्था का प्रतीक रामसेतु' का गुजराती भाषा में अनुवाद कर गुजरात की पत्र-पत्रिकाओं एवं अखबारों में प्रकाशित करने की योजना बना ली थी और आधा अनुवाद हो भी चुका था कि.... !

मैं अत्यन्त दु:खी हो गया। दीपावली के दीपक तो यों भी जगमगा उठेंगे पर हमारे भीतर यह 'महाशून्य का अँधेरा' विलाप-वेदना कैसे दूर होगा?

—डॉ० गिरीश जे० त्रिवेदी, राजकोट

पूर्वांचल में विश्वविद्यालय प्रकाशन से मोदीजी छाए रहे तथा अपने जीवन के अन्तिम समय में 'भारतीय वाङ्मय' का प्रकाशन प्रारम्भ करके अपनी कुशल पत्रकारिता की क्षमता का परिचय भी दिया है। मोदीजी के निधन से साहित्य व प्रकाशन जगत को भारी आघात पहुँचा है।

—राजेश्वरप्रसाद सिंह, गाजीपुर

यह सुनकर कि मोदीजी नहीं रहे, आघात सा लगा। मुझे दु:ख हुआ कि पिछली बार बनारस गया तो उन्हें देखकर क्यों नहीं आया?

मुझे याद आ रहा है सन् 1952। राजकमल की ओर पहली बार गोरखपुर गया था। मोदीजी ने बड़े प्रेम से मुझे अपने घर पर ही ठहरने का आग्रह किया। तब से आज तक स्नेह-सम्बन्ध हमारा बना रहा।

1961 में मैंने जब 'लोकभारती' शुरू किया तब वह मेरे द्वारा प्रकाशित पुस्तकों को बेचने में प्राथमिकता देते थे। मेरे लिए वह स्नेहभाव रखते थे, जो व्यापारिक सम्बन्धों से अलग था। ऐसे व्यक्ति के चले जाने से, स्वाभाविक है कि मुझे दु:ख तो होगा ही। परमात्मा उनकी आत्मा को शान्ति दे और आपको यह अपार दु:ख सहने की शक्ति दे।

—दिनेशचन्द्र ग्रोवर, लोकभारती, इलाहाबाद

जो दु:खद समाचार आपका 27 अक्टूबर का पत्र लाया, उसके लिए मैं कतई तैयार नहीं था। संयोग देखिए, जिस डाक से आपका यह पत्र आया, उसी डाक से 'हिन्दी प्रचारक पत्रिका' का अक्टूबर अंक भी आया, जिसमें दो जगह मोदीजी को श्रद्धांजलि है, जो समानान्तर प्रकाशक श्री विजय बेरी ने लिखा है। उसके साथ उस आदर के भाव भी हैं जो मोदीजी को श्री कृष्णचन्द्र बेरी का प्राप्त था। समान व्यवसाय में लगे लोगों में परस्पर ऐसा सद्विचार इसे जाननेवाले को भी आनन्दित और उन्नत करता है। **—राजेन्द्रशंकर भट्ट,** जयपुर

मोदीजी का अचानक महाप्रयाण हृदय को दु:ख दे गया। वे पहले की ही तरह अभी अत्यन्त अत्यन्त सजग और सक्रिय थे। साहित्य के प्रति उनका अनुराग अनूठा था। आज साहित्यकार अनेक मिल जाएँगे पर साहित्यानुरागी और साहित्यकारों का हृदय से सम्मान करनेवाला कहाँ दिखाई देता है? काशी की साहित्यिक गतिविधियों के वे केन्द्र-बिन्दु थे, एक प्रकार से साहित्य के रथ के वे कुशल सारथी थे। बनारस का पूरा साहित्य-जगत उनसे जुड़ा था और वे सबसे जुड़े थे। उस साहित्य-संगम, तीर्थ का पुरोहित अब कहाँ मिलेगा? उनके मानवीय गुणों के कारण लोग उनकी ओर आकर्षित हुए चले आते थे, स्वत:। उनका व्यक्ति अत्यन्त प्रेरक था, काम में चुस्त, वचन के पक्के और समय के पाबन्द। उनकी आन्तरिक शक्ति, उनकी अनन्त ऊर्जा की स्रोत थी।

उनके द्वारा सम्पादित 'भारतीय वाङ्मय' से उनकी लेखनी की शक्ति उजागर होती है। पत्रकारिता के उच्च मानदण्ड का दिग्दर्शन होता है। प्रकाशन उनकी हॉबी थी अत: व्यवसाय से ज्यादा वे प्रकाशित पुस्तकों की मुद्रण-कला पर ध्यान देते थे। उनकी स्मृति को मेरा शत-शत नमन!

—विश्वनाथ पाण्डेय, पटना

मोदीजी का निधन मुझे गहरे तक साल रहा है। गोरखपुर से मैंने महाराणाप्रताप डिग्री कालेज से 1955 में बी०ए० किया था। डॉ० रामचन्द्र तिवारी का सबसे प्रिय शिष्य था और चूँकि तिवारीजी का मोदीजी से निकट का सम्बन्ध था, इसलिए मोदीजी से मेरा भी सम्बन्ध हो गया। तिवारीजी की दो पुस्तकें भी आपके यहाँ से उसी वक्त छपी थीं—'रीतिकालीन हिन्दी कविता और सेनापति' और 'हिन्दी का गद्य साहित्य'। 1957 में एम०ए० की पढ़ाई के लिए मैं इलाहाबाद आ गया। तिवारीजी से तो सम्बन्ध अभी तक बना हुआ है लेकिन मोदीजी का लगभग समाप्त सा हो गया।

तिवारीजी का अभिनन्दन-ग्रन्थ विश्वविद्यालय प्रकाशन से छपा तो मैंने मोदीजी को फोन किया। आश्चर्य तब हुआ जब उन्होंने कहा कि मैं भूला नहीं हूँ, अरे आप तो महाराणा में छात्रसंघ के अध्यक्ष भी थे। फिर क्या था जो किताबें मैं उन्हें लिखता वे मुझे पार्सल से भेज देते। 'भारतीय वाङ्मय' भी मिलने लगा। उसे पढ़ कर जाना कि मोदीजी न केवल राष्ट्रीय स्तर के प्रकाशक हैं, उच्चकोटि के चिंतक, पत्रकार और लेखक भी हैं। भारतीय संस्कृति में उनकी गहरी आस्था है। 'रामसेतु' पर अभी हाल में उनका सम्पादकीय पढ़ा था। नैतिक मूल्यों के आग्रही ही नहीं हैं, भारतीय अध्यात्म में उनकी गहरी आस्था है। बाजारवाद के बढ़ते प्रभाव से वे चिंतित भी हैं। भारतीय संस्कृति पर आज जो बाजारवाद का हमला हुआ है उससे हम सबको लड़ना है।

—राजेन्द्रबहादुर सिंह, प्रतापगढ़

मोदीजी से मेरा प्रत्यक्ष परिचय नहीं था। कुछ वर्षों से 'भारतीय वाङ्मय' में उनके सारगर्भित सम्पादकीय व विद्वतापूर्ण आलेख पढ़ते रहने से ऐसा लगने लगा था, मानों उनसे वर्षों पुराना परिचय हो। यदा-कदा उनके पत्र भी मिलते रहे हैं, जिनमें मेरे प्रति उनका स्नेह व विश्वास स्पष्ट झलकता था। उनकी प्रखर राष्ट्रवादी विचारधारा, भारतीयता के प्रति उनकी अपार श्रद्धा तथा उनकी निर्भीक स्पष्टवादिता ने मुझे अत्यधिक प्रभावित किया है। सामान्य पुस्तकप्रेमी होने के नाते, मुझे पुस्तकों के प्रति उनके प्रेम व प्रतिबद्धता से निरन्तर प्रेरणा मिलती रही है।

पुरुषोत्तमदासजी स्वयं संस्था का रूप ग्रहण कर चुके थे। मेरा अनुरोध है कि उनकी पावन स्मृति में, उनके विशाल साहित्यिक एवं आध्यात्मिक व्यक्तित्व के अनुरूप 'स्मृति-ग्रन्थ' प्रकाशित किया जाना चाहिए। **—राधेश्याम धूत,** जयपुर

'भारतीय वाङ्मय' का सम्पादन मोदीजी ने जिस कुशलता, निष्पक्षता एवं निरन्तरता के साथ करते हुए हिन्दी जगत की जो सेवा की है वह सराहनीय है। **—डॉ० अखिलेशचन्द्र,** आजमगढ़

पिछली गर्मियों में जब आया था, दुकान पर मिला था। वे अत्यन्त व्यस्त थे लेकिन फिर भी समय निकाल कर बात की। 'प्रसाद' और बनारस के विषय में किताबें मैंने खरीदी, कुछ उनके सुझाव पर भी। कई पुरानी पत्रिकाओं की फोटोकॉपी कराकर मुझे दी और कई प्रकार से मेरी सहायता की।

उनसे केवल एक ही बार मिला था। उसी में उन्होंने अपनी ओर आकृष्ट कर लिया अपने सौजन्य से, औदार्य से, साहित्यिक अभिरुचि से और व्यवसायी होकर भी अ-व्यावसायिक रवैये से। वाकई वो ऊँचे दर्जे के इन्सान थे; कलात्मक अभिरुचि वाले, साहित्य से अनुराग रखने वाले, अध्ययनशीलता का रुझान रखने वाले, साधारण प्रकाशकों की व्यापारिक लाभ-लोभ की परिधि में न घिरने वाले। मुझे दु:ख है कि मेरा उनसे और अधिक सम्बन्ध क्यों न बढ़ सका? हर व्यक्ति का अपना-अपना भाग्य है।

—डॉ० ओमप्रकाश शर्मा 'प्रकाश', नई दिल्ली

नगर की निम्नांकित सामाजिक संस्थाओं से संवेदना के पत्र प्राप्त हुए। हम उनके आभारी हैं। **—सम्पादक**

मुमुक्षु भवन माध्यमिक संस्कृत विद्यालय, काशी मुमुक्षु भवन सभा, मारवाड़ी युवक संघ, श्री काशी जीवदया विस्तारिणी गोशाला एवं पशुशाला, श्रीराम लक्ष्मीनारायण मारवाड़ी हिन्दू अस्पताल, हिन्दू सेवा सदन चिकित्सालय, राजा बलदेवदास बिड़ला अस्पताल, वाराणसी प्रकाशक संघ, वाराणसी पुस्तक व्यवसायी परिषद, रोटरी क्लब वाराणसी मिड टाउन, भारत विकास परिषद, काशी

अपनों-सा एहसास

तुम्हारे चेहरे की तेजस्विता
भाषा की अस्मिता
वाणी की मनोहरता
छा गई मन-मस्तिष्क में।
व्यथा हुई—
अन्त:करण में;
अपनों के एहसास की।
प्रश्न उठा—
क्या भाग्य है मेरा
न गुरु
न पिता, न ही संरक्षक
फिर भी इतना मोह
अवश्य ही किसी पूर्व जन्म के
कर्मों का फल है
'उस व्यक्तित्व का दर्शन'।

—प्रो० मालती दुबे,
प्राचार्य, गुजरात विद्यापीठ,
अहमदाबाद

पुस्तक परिचय

जनसम्पर्क : सिद्धान्त और व्यवहार
डॉ० अर्जुन तिवारी व विमलेश तिवारी

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 978-81-7124-561-1
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : (सजिल्द) 300.00 (अजिल्द) 200.00

जनसम्पर्क छवि-निर्माण की इंजीनियरिंग तथा जनमत को अपने पक्ष में करने की मनोहारी कला है। शासन, उद्योग, वित्त, शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा आदि सभी क्षेत्रों में कार्यरत संस्थान अपनी पारदर्शिता तथा प्रामाणिकता प्रस्तुत करने के लिए जनसम्पर्क जैसे सशक्त एवं प्रभावकारी माध्यम अपनाते हैं। जनसंचार एवं पत्रकारिता की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विधा जनसम्पर्क ही है जिसके अध्ययन-अध्यापन हेतु ग्रन्थ अपरिहार्य हो चुके हैं। जनसंचार, जनसम्पर्क, जनमत, प्रचार तथा विज्ञापन की विविध अवधारणाएँ, उनके तौर-तरीके, संस्थान प्रबंधन, ईवेंट प्रबंधन, आपदा प्रबंधन, गृह पत्रिका प्रकाशन के विभिन्न पहलुओं पर सोदाहरण तथ्यों को इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है। शासकीय, अशासकीय घरानों, पब्लिक और प्राइवेट सेक्टर, औद्योगिक और निजी घरानों तथा कार्पोरेट जगत में कार्यरत जनसम्पर्क अधिकारी अपने दायित्वों का निर्वहन सफलतापूर्वक कैसे करें—इसकी विवेचना इस ग्रन्थ में है।

जनसम्पर्क अभियान में दक्ष व्यक्ति पक्ष-विपक्ष में सौहार्द भाव स्थापित करता है। पी०आर० विचारों का मैनेजमेंट प्रबन्धन की विधा, मानवीय विज्ञान तथा संगठन का दिव्य दर्शन है जिससे संस्थाएँ गौरवदीप्त होती हैं।

आजकल जनसम्पर्क पत्रकारिता के पाठ्यक्रम प्राय: सभी विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित हो रहे हैं। मीडिया के प्रशिक्षुओं और शिक्षकों के सामने प्रामाणिक ग्रन्थों की अनुपलब्धता है। इस अभाव की पूर्ति में स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी की प्रेरणा से लेखकद्वय ने अवश्य ही ऐतिहासिक महत्व की कृति उपस्थापित की है जो उच्च शिक्षा-जगत में शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिए अनूठी सिद्ध होगी।

'**जनसम्पर्क : सिद्धान्त और व्यवहार**' में कुल 38 अध्याय हैं जिनमें जन, जनसम्पर्क, जन माध्यम, जनसंचार के महत्वपूर्ण सिद्धान्त समाहित हैं। जनमत-निर्माण, प्रचार, विज्ञापन के क्षेत्र में लेखन, सम्पादन की महत्वपूर्ण विधा को उदाहरण के साथ समझाने में लेखक को सफलता मिली है। संस्था संकट, मार्केटिंग के साथ, कार्पोरेट संगठन, कार्पोरेट जनसम्पर्क, वैश्वीकरण और कार्पोरेट पी०आर० जैसे अध्यायों में जनसम्पर्क के व्यावहारिक पक्ष पर प्रकाश डाला गया है जिस ओर अभी तक लेखकों का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ था।

ब्राण्ड एम्बेसडर, न्यू मीडिया और पी०आर० एवं जनसम्पर्क जगत के अनुकरणीय हस्ताक्षर के विशद विवेचन द्वारा युवा पीढ़ी के मार्गदर्शन में इस ग्रन्थ की उपादेयता स्वयंसिद्ध है। जनसम्पर्क की आधुनिक प्रवृत्ति तथा उसके शोधसम्बन्धी विविध आयामों की सोदाहरण चर्चा के चलते यह ग्रन्थ 'जनसम्पर्क समग्र' के रूप में प्रतिष्ठित होगा जिसमें कोई सन्देह नहीं है।

जनसंचार तथा पत्रकारिता पर अनेक पुरस्कृत ग्रन्थों के लेखक डॉ० अर्जुन तिवारी ने स्वस्थ जनसम्पर्क-कला पर प्रकाश डाला है तथा श्री विमलेश तिवारी ने आधुनिक कार्पोरेट जगत में जनसम्पर्क की विभिन्न प्रक्रियाओं को प्रस्तुत किया है। लेखकद्वय की दूरदर्शिता तथा लेखन-क्षमता के कारण प्रस्तुत ग्रन्थ उपलब्धि है जिससे संस्थान-स्वामी, अधिकारी, उपभोक्ता, आम जनता तथा जनसम्पर्क अधिकारी अवश्यमेव लाभान्वित होंगे।

—बच्चन सिंह, वरिष्ठ पत्रकार

अब तो बात फैल गई
[यादों, विवादों और संवादों की संस्मरणात्मक प्रस्तुति]
डॉ० कान्तिकुमार जैन

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 978-81-7124-586-4
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 250.00

बात तो फैलने लायक थी ही

हिन्दी संस्मरण साहित्य के प्रतिष्ठापक कान्तिकुमार जैन की पुस्तक 'अब तो बात फैल गई' अर्वाचीन लेखकों को सीख देती है कि संस्मरण लेखन में साहित्यिकता को बचाये व बनाये रखने हेतु तत्वगत दृष्टि कैसे पैदा की जा सकती है और यह दृष्टि कितनी आवश्यक है। 'लौटकर आना नहीं होगा', 'तुम्हारा परसाई' और 'जो कहूँगा सच कहूँगा' के बाद श्री जैन का यह चौथा संस्मरण-संग्रह है, जिसमें इन्होंने प्रचलित संस्मरण-संहिता का अतिक्रमण करते हुए उन विद्वानों पर भी संस्मरण लिखे, जिनसे कभी मिले ही नहीं। सिर्फ आवृत्त आवरण, पृष्ठभूमि व स्वजनों से साक्षात्कार कर रोचक संस्मरण लिखने की विशिष्ट किन्तु अपरिहार्य साहित्यिक विधा का आविष्कार किया है कान्तिकुमार जैन ने। नज़ीर अकबराबादी, सुभद्राकुमारी चौहान और जयशंकर प्रसाद के संस्मरण इसके प्रमाण हैं। लेखक को अपने लेखन में हमेशा नव्य प्रयोग से सम्भावनाओं के नये-नये द्वार खुलते दिखे। तमाम मठाधीशों के ना-नुकुर, असहमति व उपेक्षा और जिज्ञासु पाठकों की बढ़ती संख्या व सराहना से होते हुए परिणाम यह निकला कि कान्तिकुमार जैन हिन्दी के शिखर संस्मरणकार बन बैठे हैं। यह शिखर आम लोकप्रियता और आदर्श का मिश्रित बिन्दु है, जहाँ से उतरने (गिरने की नहीं) या चढ़ते जाने की गुंजाइश भी लगातार बनी रहती है। हालांकि श्री जैन साहित्य की स्तरीयता की रक्षा करते हुए पाठकों के बीच भी स्वीकार्य हैं। आलोचकों-समीक्षकों द्वारा तो अनेक बड़े रचनाकारों को खारिज करते रहने का परम्परागत इतिहास श्री जैन को पता है। भला हो पाठकों का, जिन्होंने उन रचनाकारों को अपनी खोज के योग्य समझा। प्रेमचंद और परसाई भी तो पाठकों की ही खोज थे।

संस्मरण साहित्य के सर्वाधिक विवादित लेखक डॉ० कान्तिकुमार जैन परसाई और मुक्तिबोध के करीबी मित्र रहे हैं, अत: व्यंजना के साथ-साथ अपने समय के यथार्थ के छिलकों को परत-दर-परत विमोचित करने का गुर बखूबी जानते हैं। 'अब तो बात फैल गई' में भी डॉ० जैन जहाँ अन्य धुरन्धरों के गोपन को 'ओपन' करते हैं, वहीं स्वयं के बारे में भी कुछ छिपाते नहीं। पुस्तक के 'संवाद' खण्ड में अपना सच सहज ही उजागर किया है। अपनी तीखी, पैनी व तुर्श टिप्पणियों के साथ याद, विवाद और संवाद खण्डों में विभाजित ये संस्मरण डॉ० हरीसिंह गौर, भगीरथ मिश्र, राजेन्द्र यादव, हरिशंकर परसाई, कमलेश्वर व मैत्रेयी पुष्पा की मनोसंरचना को तो टटोलते ही हैं, उनके साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश को भी खँगालते हैं। इस पुस्तक के पन्नों पर आपको अटलबिहारी वाजपेयी, बिल क्लिंटन, हरिवंशराय बच्चन, अमिताभ बच्चन, विद्यानिवास मिश्र, अशोक वाजपेयी, शिवकुमार मिश्र, विष्णु खरे, रवीन्द्र कालिया, भारत भारद्वाज व कमला प्रसाद जैसे लोग बराबर चहलकदमी करते मिल जाएँगे। कमलेश्वर जैसों के साथ मैत्रेयी पुष्पा, ईसुरी, सानिया मिर्जा जैसे इस पुस्तक में व्यक्ति नहीं रह जाते, विभिन्न ग्रन्थियों, प्रवृत्तियों और मानसिकताओं के प्रतीक बन जाते हैं। कान्तिकुमार जैन ने अपनी पिछली पुस्तकों की तरह ही बतरस और भाषा की उछाल पर ध्यान दिया है। इस पुस्तक में सम्बन्धित व्यक्तियों के नामवाले शीर्षकों के ठीक नीचे एक उपशीर्षक-वाक्य जोड़ा है जो पाठकों को आकृष्ट

करता है, मसलन—नज़ीर अकबराबादी को 'ताजमहल के पिछवाड़े का कवि', सुभद्राकुमारी चौहान को 'जेल तो मेरा मायका है', डॉ० हरीसिंह गौर को 'दमड़ी दमड़ी माया जोड़ी', भगीरथ मिश्र को 'फिटकरी जैसा व्यक्तित्व', राजेन्द्र यादव को 'देवताओं का विरोध करने की जिद', हरिशंकर परसाई को 'नर्मदा और हरसूद की यादें', हमारे हिन्दी विभाग में 'अपने अपने आदमी', रजनीश के दर्शन को 'आध्यात्मिक दाद खुजाने का मजा', अटलबिहारी वाजपेयी को 'कैदी कविराय से भूतपूर्व कवि तक का सफरनामा' और हिन्दी समीक्षकों की बिडाल राशि को 'बिल्ली की नजर छीछड़ों पर' जैसे वाक्य तरह-तरह के रसों में सराबोर तीर की तरह लगते हैं।

कान्तिकुमार जैन का मानना है कि ''संस्मृत के साहित्य के सहारे भी संस्मरण की बेल चढ़ाई जा सकती है।'' 'याद' खण्ड में कहीं यात्रा विवरण पर संस्मरण की ड्राफ्टिंग की गयी है, कहीं रिपोतार्ज पर तो कहीं समीक्षा पर। इस पुस्तक के अधिकतर संस्मरण 'हंस', 'नया ज्ञानोदय', 'वागर्थ', 'पहल' और 'वसुधा' जैसी पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित हो चुके हैं। इन्हीं प्रकाशनों ने श्री जैन के संस्मरणों को पाठकों में लोकप्रिय बनाया और शायद पाठकों की प्रतिक्रियाओं ने ही श्री जैन को संस्मरण साहित्य की इस लोक-लुभावन शैली की ओर आकृष्ट किया। हिन्दी साहित्य, अनेक क्षेत्रीय बोलियों के व्याकरण व कोश पर गम्भीर कार्य कर चुके कान्तिकुमार जैन के संस्मरण उपन्यासों जैसी रोचक भाषा में हैं जहाँ व्यक्तियों के भित्ति चित्र तो हैं ही, छोटे-बड़े अनेक साहित्यकारों, कलाकारों, अध्यापकों, राजनेताओं, खिलाड़ियों और पत्रकारों के जीवंत नखचित्र भी हैं। इन संस्मरणों में व्यक्ति ही नहीं, संस्थाएँ, सरकारी नीतियाँ व सामयिक वाद-विवाद भी विषय-वस्तु के रूप में लिखे गये हैं। कुल बीस संस्मरण व तीन साक्षात्कारों से समृद्ध यह पुस्तक पाठकों को बाँधने में तो सक्षम है ही, साहित्यिक सामान्य ज्ञान की जिज्ञासा को भी शान्त करती है। **—एल. उमाशंकर सिंह**

स्वर से समाधि

स्वामी कृष्णानन्दजी 'महाराज'

द्वितीय संस्करण : 2007

ISBN : 978-81-7124-597-0

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 100.00

अध्यात्म, दर्शन और नैतिकशास्त्रीय विमर्शों पर आधारित दर्जनभर पुस्तकों के प्रणेता एवं कबीरपंथी स्वामी आत्मादास के विद्वान शिष्य स्वामी कृष्णानन्दजी 'महाराज' ने इस पुस्तक में भक्तों को वाणी या स्वर के सकारात्मक नकारात्मक परिणामों से परिचित कराया है। स्वामी कृष्णानन्दजी तापस योगी और तांत्रिक भी हैं, अत: इस पुस्तक में घोर तांत्रिकों के 'खेचर शास्त्रों' और 'ज्ञानगंज' का भी अभिज्ञान है। यम, नियम, क्षर, अक्षर, निरक्षर, स्नायु-विद्या, स्वर और पाँच तत्त्व का शास्त्रीय पद्धति में विवेचन हुआ है। पाँच, सात, तेरह जैसी रहस्य-संख्याओं का अध्ययन और फलित ज्योतिष व अदृश्य-दर्शन पर भी पुस्तक में विचार किया गया है। पुस्तक की भूमिका डॉ० शुकदेव सिंह ने लिखी है।

सात्वतार्चन

वासुदेव शरण अग्रवाल जन्मशती स्मृति ग्रन्थ

प्रो० मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी

प्रो० दीनबन्धु पाण्डेय

प्रथम संस्करण : 2007

ISBN : 978-81-7124-578-9

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 500.00

भारतीय संस्कृति और कला के पुरोधा प्रो० वासुदेव शरण अग्रवाल के बहुआयामी योगदान पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कला-इतिहास विभाग ने नवम्बर 2004 में त्रिदिवसीय संगोष्ठी आयोजित की थी जिसमें प्रो० दयानन्द त्रिपाठी (चेयरमैन, आईसीएचआर, नई दिल्ली), डॉ० एम०एल० निगम (हैदराबाद), प्रो० आर०सी० शर्मा, प्रो० रेवाप्रसाद द्विवेदी, प्रो० किरणकुमार थपल्याल, प्रो० रतन पारिमू (बड़ौदा), प्रो० आर०डी० चौधरी (पूर्व कुलपति एवं महानिदेशक, राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली), प्रो० टी०पी० वर्मा, डॉ० टी०के० बिश्वास, प्रो० शैलेन्द्रनाथ कपूर (लखनऊ), प्रो० विदुला जायसवाल, डॉ० एस०डी० त्रिवेदी, प्रो० दीनबन्धु पाण्डेय जैसे विद्वानों ने भारतीय कला और संस्कृति के विभिन्न पक्षों पर मौलिक शोधपत्रों की प्रस्तुति के माध्यम से प्रो० अग्रवाल के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी। उस संगोष्ठी में मुख्य आलेख कलाविदुषी डॉ० कपिला वात्स्यायन ने प्रस्तुत किया था। संगोष्ठी की सम्पूर्ण सामग्री पुस्तकाकार रूप में वासुदेव शरण अग्रवाल जन्मशती स्मृतिग्रन्थ—**सात्वतार्चन** में प्रकाशित है। इस ग्रन्थ के विद्वान लेखकों ने न केवल भारतीय कला और संस्कृति के अनछुए पक्षों को गहराई से प्रस्तुत किया है, वरन् नवीन सामग्रियों के साथ ही नवीन अवधारणाओं और प्रो० वासुदेव शरण अग्रवाल की कृतियों के सर्वकालिक महत्व को भी रेखांकित किया है। वास्तव में इस ग्रन्थ की कला-सामग्री भारतीय कला और संस्कृति के अध्येताओं एवं गम्भीर शोधकर्ताओं का न केवल शोध-पद्धति और सामग्री की दृष्टि से मार्गदर्शन करनेवाली है वरन् शोध की नवीन सम्भावनाओं और बिन्दुओं की आधारभूमि भी तैयार करती है। डॉ० कपिला वात्स्यायन का आलेख डॉ० अग्रवाल के सम्पूर्ण अध्ययन की आधारभूमि को तलाशते हुए उसका सारांश प्रस्तुत करता है, जो भारतीय विद्या के किसी भी क्षेत्र में कार्य करनेवालों के लिए आवश्यक एवं मार्गदर्शक है। पुस्तक में न केवल मृण्मूर्तियों, कला-स्थापत्य के विभिन्न पक्षों, मुद्रा-शास्त्र, अभिलेख, सौन्दर्यशास्त्र एवं सांस्कृतिक अध्ययन विषयों पर विद्वानों के शोधपूर्ण लेख हैं वरन् लोककला व लोकसाहित्य से सम्बन्धित सामग्री को भी उतना ही महत्व दिया गया है।

शब्द मुझको बहुत दूर तक ले चले
तब शुरू हो गए अर्थ के सिलसिले,
ज्यों घटाओं में चमकी बिजलियाँ.
या अँधेरों में दीपक अनेको जलें।

—प्रो० सर्वदानन्द द्विवेदी, उन्नाव

शीघ्र प्रकाश्य

साहित्यिक निबन्ध

ख्यातिलब्ध समीक्षक **प्रो० त्रिभुवन सिंह** एवं उनके सहयोगी **प्रो० विजयबहादुर सिंह**

द्वारा सम्पादित

- हिन्दी के शीर्षस्थ विद्वानों—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ० नगेन्द्र, डॉ० देवेन्द्रनाथ शर्मा, डॉ० उदयभानु सिंह, डॉ० भोलाशंकर व्यास, डॉ० प्रेमशंकर, डॉ० शिवसहाय पाठक, डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, डॉ० विष्णुकान्त शास्त्री आदि के निबन्धों के संकलन से चर्चित व महत्त्वपूर्ण निबन्ध संग्रह।
- हिन्दी साहित्य के इतिहास, समीक्षा, सिद्धान्त, विविध काव्य एवं गद्य विधाओं व उनके प्रतिनिधि लेखकों पर प्रसिद्ध विद्वानों के निबन्धों का महत्त्वपूर्ण संग्रह।
- दलित साहित्य, सामाजिक संरचना में स्त्री की भूमिका पर तथा स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी पत्रकारिता जैसे नव्यतम-प्रासंगिक विषयों पर उत्कृष्ट निबन्धों का संचयन।
- स्नातक, स्नातकोत्तर एवं पी०सी०एस०, आई०ए०एस० जैसी प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रतिभागियों के लिए
- अनुवाद विज्ञान, कम्प्यूटर अनुप्रयोग एवं सूचना तकनीकी पर महत्त्वपूर्ण लेख।

724 पृष्ठों की संग्रहणीय सामग्री